कृषि जीवविज्ञान प्रायोगिक
(Agriculture Biology - Practical)

प्रयोग–1

उद्देश्य :– टिड्डे के मुखांगों की पहचान एवं कार्य (कोई एक मुखांग)

आवश्यक सामग्री :– चार्ट / पावर पॉइन्ट प्रजेन्टेशन, मृत टिड्डा, चिमटी, पेन्सिल, ड्राइंग शीट आदि।

विधि :– अध्यापक द्वारा उपरोक्त में से उपलब्ध विधि द्वारा टिड्डे के मुखांगों की पहचान व कार्य बताए जाएंगे तथा छात्रों से पूछे जायेंगे।

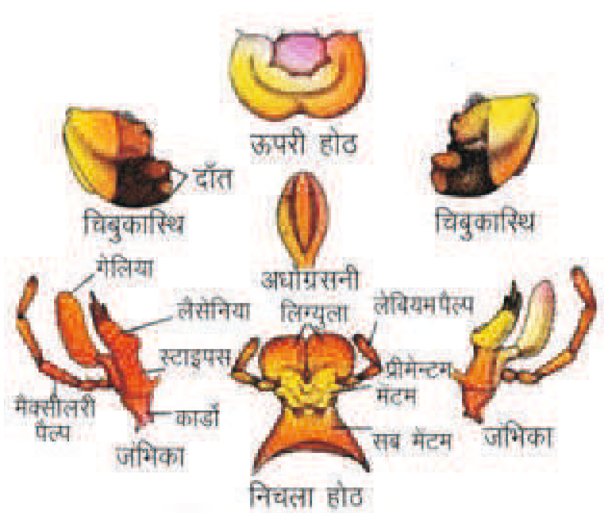

चित्र–1.1 टिड्डे के मुखांग के विभिन्न भाग

परिचय :– टिड्डे के मुखांग काटने चबाने (Biting & chewing type) वाले प्रकार के होते है। जिन्हें आदिम प्रकार (Primitive type) के मानते है। जो सिर की निचली सतह से मुख छिद्र (Pre oral cavity) को घेरे हुए जुड़े रहते हैं। उनकी पहचान एवं कार्य चित्रानुसार निम्न प्रकार से होते है:–

1. ऊपरी होठ (Labrum)– यह चौड़ा तथा खोखला होता हैं। जो सिर के क्लाइपियस से जुड़कर मुख द्वार पर छज्जे की तरह छाया रहता हैं। एवं इस पर स्वाद ग्रन्थियाँ (Taste buds) पाई जाती है। यह मुख को आगे से बन्द करता हैं।

2. चिबुकास्थि (Mandibles)– ये एक जोड़ी कठोर खण्डरहित त्रिभुजाकार होते है, जो ऊपर से चपटे तथा भीतरी किनारों पर आरी जैसे दाँत होते हैं, जो भोजन को काटने एवं चबाने का कार्य करते हैं।

3. जंभिका (Maxillae)– चिबुकास्थि के ठीक पीछे की ओर यह स्थित होती है एवं एक जोड़ी होती है । ये भोजन को इस प्रकार से पकड़ कर रखती है कि चिबुकास्थि इसे आसानी से काट सके । आधार से यह कार्डो (Cardo) स्टाइप्स (Stipes) से जुडी रहती हैं, शेष भागों में लैसेनिया (Lacinia)] गैलिया (Galea) एवं मैक्सीलरी पैल्प (Maxillary Palp) जुड़े रहते हैं।

4. निचला होठ (Labium) – यह जंभिका के पीछे होता हैं जो मुँह को बन्द करने का काम करता हैं अर्थात निचला होठ बनाता है इसके शेष भाग लिग्युला, प्रीमेन्टम, मेंटम, सबमेंटम एवं लेबियम पेल्प होते हैं।

5. अधोग्रसनी (Hypopharynx) – मुख गुहा के मध्य में एक जीभ जैसा अंग होता हैं, वह अधोग्रसनी कहलाता है। इसके पास ही लार ग्रंथियाँ होती है।

❑

प्रयोग–2

उद्देश्य :– केचुए की आहार नाल के मॉडल / चित्र में अंगों की पहचान कीजिए। (कोई–4)

आवश्यक सामग्री :– चार्ट / पावर पॉइन्ट प्रजेन्टेशन, मृत केचुए, चिमटी, पेन्सिल, ड्राइंग शीट आदि।

विधि :– अध्यापक द्वारा उपरोक्त में से उपलब्ध विधि द्वारा केचुए के आहार नाल के मॉडल / चित्र में अंगों की पहचान कराई जाएगी तथा छात्रों से विभिन्न भागों के बारे में पूछा जायेगा तथा चित्र बनवाया जाएगा।

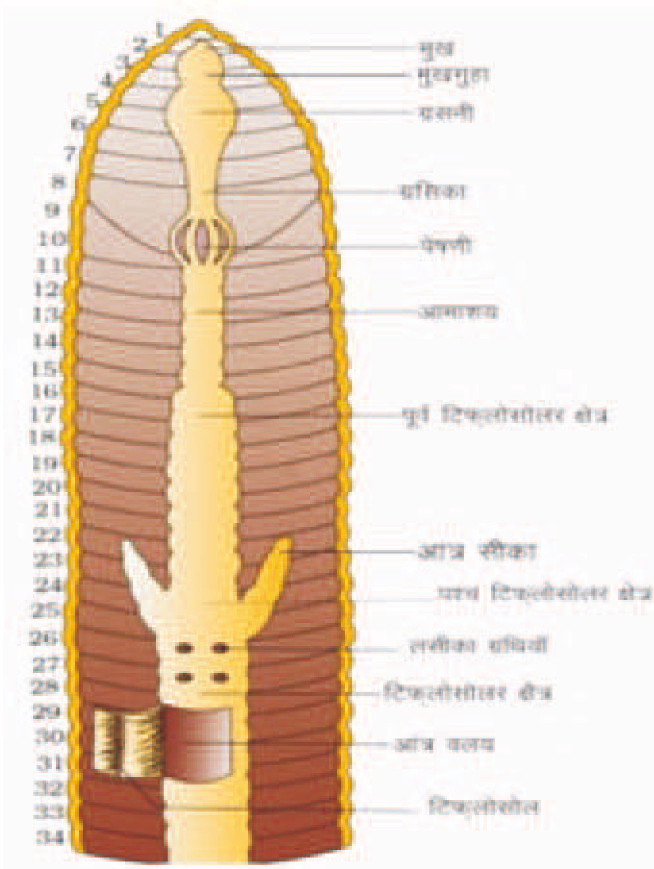

चित्र–2.1 केंचुए का नामांकित चित्र

परिचय : केचुए की आहारनाल शरीर की पूरी लम्बाई में फैली होती है। जो मुख से शुरू होकर गुदा तक जाकर खत्म होती है। इसके विभिन्न भागों एवं अंगों का विस्तृत विवरण अध्याय–10 में किए गए वर्णन के अनुसार अध्यापक द्वारा समझाया जाएगा तथा छात्र स्वयं भी इनका अध्ययन करेंगे।

❑

प्रयोग–3

उद्देश्य : पादप संरक्षण में प्रयुक्त यन्त्रों के संचालन का प्रदर्शन (डस्टर / स्प्रेयर)

महत्व : पौध संरक्षण यंत्रो द्वारा पीड़कनाशी एवं कीटनाशी रसायनों को वांछित मात्रा में, सही समय पर एवं कम खर्च पर छिड़का या भुरका जा सकता है। अनिश्चित मात्रा में कीटनाशकों के प्रयोग से फसलों, वातावरण, लाभकारी मित्र कीटों, मानव एवं पशुओं पर कुप्रभाव पड़ता है। कीट विष प्रसारण उपकरणों की क्षमता तथा योग्यता इस बात पर निर्भर होती है कि इनकी सहायता से कम से कम कीटनाशियों का प्रयोग करके अधिक से अधिक कीटों को मारा जा सके। अतः पौध संरक्षण उपकरणों की बनावट, क्षमता व संचालन विधि की पूरी जानकारी के पश्चात् ही कीटनाशकों का प्रयोग सही तरीके से किया जा सकता है।

प्रमुख प्रधूलक एवं फुहारक यन्त्रों का सामान्य अध्ययन :

रोटेरी प्रधूलक (Rotary duster)– इसे हस्त क्रेंक डस्टर भी कहते है। यह कम ऊँचाई वाली फसलों / सब्जियों, गृह वाटिकाओं, पौधशालाओं तथा गोदामों आदि में अधिक उपयोग में लिया जाता है। सामान्यतः यह दो प्रकार के होते हैं, एक जो कन्धे पर लटकाते हैं और दूसरा जिसे पेट पर टिकाकर भुरकाव करते ''

चित्र 3.1 : हस्तचलित रोटेरी प्रधूलक

रोटेरी प्रधूलक की टंकी में चूर्ण भरने की क्षमता 4 से 6 किलोग्राम होती है। इस टंकी के भीतर मथनी (Agitator) लगी होती है जो चूर्ण को टंकी में हिलाती है ताकि चूर्ण जम नहीं पाये। इसके अतिरिक्त फूंकनी (Blower) भी मुख्य अंग होता है जो चूर्ण को धुएँ के रूप में बदलने (Atomize) हेतु आवश्यक वायु की धारा प्रदान करती है। यंत्र का भार लगभग 6.0 से 7.0 किलोग्राम होता है। टंकी में तीन–चौथाई भाग तक कीटनाशी चूर्ण से भरने के पश्चात् यंत्र को कंधे या सीने पर बाँध देते हैं फिर हैन्डिल को धीरे–धीरे घुमाते हैं जिससे गियर्स व पंखा तेजी से घुमने लगते हैं। इनके साथ विलोड़क की छड़ भी घूमती है जिससे पंखा भी तेजी से घूमता है। जिससे निकास नली (Discharge pipe) में वायु का वेग उत्पन्न होने पर कीटनाशी चूर्ण नली से नोजिल के द्वारा बाहर निकलने लगती है। भूरकाव को नियंत्रित करने के लिए टंकी के पास तार के नियंत्रक (Regulator) होते हैं। इसके अतिरिक्त शक्ति (Power) से चलने वाले प्रधूलकों का पंखा स्वतंत्र इन्जन या ट्रैक्टर से चलता है। पंखे की गति तेज होने के कारण इससे 10.0 से 12.0 हैक्टेयर में प्रतिदिन भुरकाव किया जा सकता है।

हस्तचलित नैपसैक स्प्रेअर (Knapsack sprayer) : यह छोटे एवं मध्यम कृषकों के लिये तथा कम ऊँचाई वाली फसलों, सब्जियों, पौधशाला, झाडियों व छोटे वृक्षों के लिए छिड़काव हेतु एक आदर्श यंत्र है। यह एक जल दाब चलित (Hydraulic) व लगातार दबाव बनाकर चलाये रखने वाला छिड़काव यंत्र है। इसे पीठ पर रखकर चलाया जाता है। कार्यकर्त्ता एक हाथ से हैण्डिल चलाता है तथा दूसरे से छिड़काव करता है। इस यन्त्र में तीन मुख्य भाग होते हैं–टंकी, पम्प और छिड़काव नली जिसके अंतिम सिरे पर नोजल लगा होता है। इसकी टंकी चपटी तथा ताँबा, पीतल व प्लास्टिक की बनी होती है। इसकी क्षमता 10–16 लीटर घोल की होती है। टंकी में ही वायु सम्पीड़न विधि या पम्प के बेरल में यांत्रिक मथनी (Agitator) की व्यवस्था होती है। टंकी में पम्प लगा होता है जो घोल को पम्प सिलिंडर पर लगे निकास से बाहर फेंकता है। टंकी पर लगे प्रचालक हेण्डिल में एक लीवर होता है।

चित्र 3.2 : हस्तचलित नैपसैक स्प्रेअर

❑

प्रयोग–4

उद्देश्य– दिये गये पादप नमूनों के लक्षणों का अध्ययन कर रोग की पहचान कीजिए तथा रोगजनक का नाम लिखिए एवं उपस्थित लक्षणों का वर्णन कीजिए।

आवश्यक सामग्री– संक्रमित पौधे का भाग, वेस्कुलम, कैंची, चाकू, पोलिथिन बैग, हैण्डलैन्स, सूक्ष्मदर्शी, स्लाइड, कवरस्लीप, सूई, चिमटी, कॉटन ब्ल्यू अभिरंजक, ग्लिसरीन, आदि।

विधि–

1. सर्वप्रथम रोग से संक्रमित पौधे के भाग को सुरक्षित खेत से एकत्रित कर वेस्कुलम में डालकर प्रयोगशाला में लाते हैं। अनावश्यक भागों को हटाकर उसका उचित संरक्षण करते है।
2. संरक्षित या तुरन्त लाये गये संक्रमित भाग को हैण्डलैन्स या सूक्ष्मदर्शी की सहायता से निरीक्षण कर उस पर उपस्थित विभिन्न प्रकार के लक्षणों जैसे आसिता, म्लानि, अंगमारी, कजली, रोली, झुलसा, आर्द्रगलन, उत्तकक्षय, हरिमहीनता, धब्बे, दाग, दाह, विगलन (जड़, तना, पत्ति) मोजेक, शीर्ष मृत्यु जैसे लक्षणों को पहचानते हैं।
3. पहचाने गये लक्षणों के आधार पर तथा आवश्यकता होने पर प्रार्देश/स्लाइड को सूक्ष्मदर्शी में देखकर रोगजनक के आधार पर रोग की पहचान की जाती है।

परिणाम– दिया गया पौधे का नमूना/प्रार्देश––––रोग से संक्रमित हैं।

मुख्य रोग लक्षणों का संक्षिप्त परिचय–

पौधों में मुख्य रूप से दो प्रकार के लक्षण प्रकट होते है–

1. पौधे पर रोग जनक की भौतिक उपस्थिति के कारण प्रकट लक्षण–

(1) आसितायें– कवकों के कवक जाल एवं उनके कायिक या जनन अंग जैसे बीजाणु धानी, बीजाणु धानीधर, कवकजाल, बीजाणु आदि की भौतिक रूप से पौधे के सतह पर उपस्थिति के कारण पौधों के रंग रूप में परिवर्तन दिखाई देता है तथा इसके कारण पौधे के प्रकाश संश्लेषण एवं श्वसन दर भी प्रभावित होती है। इस प्रकार के लक्षणों को आसिता कहते है। ये दो प्रकार की होती है–

(अ) मृदु रोमिल आसिता– इस लक्षण में पौधे की पत्ती की निचली सतह पर कवक के कवकजाल व बीजाणु कपासीय वृद्धि के रूप में दिखाई देते हैं। उदाहरण– बाजरे का मृदु रोमिल रोग।

(ब) चूर्णिल आसिता– इस प्रकार के रोग लक्षण में कवक का कवकजाल एवं उस पर बनने वाले बीजाणु सफेद आटे जैसे चूर्ण के रूप में पौधे के बाहय सतह पर उपस्थित रहते हैं तथा पौधे के विभिन्न शरीर कार्यकी गतिविधियों को प्रभावित करते हैं। उदाहरण– बेर का छाछ्या रोग।

चित्र 4.1 : बेर का छाछ्या रोग/चूर्णिल आसिता

(2) म्लानि रोग – ये लक्षण पौधे में पोषक तत्वों की कमी के रूप में लक्षित होते है जिसका कारण इनके संवहनी ऊतकों में रोग जनक कवक के संग्रहण, उनसे उत्पन्न अभिकर्मकों (Enzyme) एवं विषैले पदार्थो (Toxins) के प्रभाव के कारण पौधे अवशोषित खाद्य पदार्थो को ऊपरी भागों तक नहीं पहुंचा पाते, जिसके कारण पत्तियां, टहनियां एवं शाखाएं प्रारम्भ में मुरझा जाती है तथा अधिक समय तक स्थिति बनी रहने पर बदरंग होकर सूखने लगती है तथा इन भागों में ऊतक क्षय होने लगता है। इस लक्षण को म्लानि कहते है। उदाहरण – जीरे का म्लानि रोग।

चित्र 4.2 : जीरे पर म्लानी रोग का प्रभाव

(3) अंगमारी – इस रोग लक्षण में पौधे के तरूण पुष्पी भाग एवं पत्तियाँ तथा शाखाएँ तीव्र गति से मृत्यु को प्राप्त होने लगती है तथा इन भागों का रंग गहरा, भूरा या काला हो जाता है। उदाहरण – जीरे की अंगमारी, आलू की विलम्ब अंगमारी आदि।

(4) कज्जली– यह रोग लक्षण भी प्रायः पौधे के पुष्पी भागों के रूपान्तरण के कारण प्रकट होते हैं। पौधे में दानों के स्थान पर काला कोयले जैसा चूर्ण प्रकट हो जाता है। ये चूर्ण

चित्र : 4.3 गेहूँ का अनावृत एवं जौ का आवृत कजली रोग

कवक के बीजाणु से बना होता हैं तथा आवृत या अनावृत रूप में मिलता है। पौधे के अन्य भागों जैसे पत्तियों आदि का भी रूपान्तरण हो सकता है। उदाहरण – गेंहूँ एवं जौ के कण्ड़ रोग।

(5) किट्ट/रोली रोग – इस रोग के लक्षण पौधे में जंग लगने जैसे विक्षत के रूप में दिखाई देते हैं। गेहूँ के पौधे में भूरे, काले, पीले रंग का किट्ट रोग प्रकट होता है। इनके कारण पौधों में श्वसन की दर बढ़ जाती है तथा प्रकाश संश्लेषण की क्रिया प्रभावित होती है तथा पौधे कमजोर हो जाते हैं। पौधों के भागों पर यूरेडियम या टिलियम दिखाई देते है।

चित्र : 4.4 किट्ट/रोली रोग

(6) अतिवृद्धि – पौधे के संक्रमित पुष्पी भागों के रोग जनक द्वारा संक्रमित होने से वे रूपान्तिरित हो जाते है तथा कोशिकाओं की आकार बढ़ने से (Hypertrophy) या कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि (Hyperplasia) के कारण इन भागों में अतिवृद्धि (Overgrowth) देखी जाती है। उदाहरण – सरसों का स्टेगहेड़।

चित्र : 4.5 स्टेगहेड

(7) आर्द्र गलन – रोग के इस लक्षण में फल एवं सब्जियों की पौध में तने में मृदा के समीप वाले दो से तीन सेन्टीमीटर का भाग जिसे कॉलरक्षेत्र कहते है, अपघटित हो जाता है जिसके कारण पौधे के ऊपरी भाग का भार नही उठा पाते और खेत में लोट जाते है। इस लक्षण को आर्द्रगलन Damping Off कहते है। उदाहरण – तम्बाकू का आर्द्रगलन रोग।

(8) फफोला (Blister) – सरसों कुल में एल्ब्यूगो केन्डिडा रोगजनक के कारण पत्ती पर फफोले सदृश लक्षण

चित्र : 4.6 सरसों का श्वेत फफोला रोग

प्रकट होते हैं, जो कि उप त्वचा के नीचे कवकजाल पर बनने वाले बीजाणु धानीधर एवं उन पर बनी बीजाणु धानियों के कारण दिखाई देते हैं। उदाहरण– सरसों का सफेट किट्ट रोग।

2. पौधों पर पड़ने वाले प्रभाव के कारण उत्पन्न लक्षण–

(1) ऊतक क्षय – पौधों पर रोगजनक के प्रभाव के कारण तथा उनके द्वारा कोशिकाओं से भोज्य पदार्थ ग्रहण करने के कारण कोशिकाऐं धीरे–धीरे मृत्यु को प्राप्त हो जाती है तथा इनका रंग गहरा भूरा हो जाता है। कोशिकाओं की मृत्यु एवं भूरे रंग की उपस्थिति के इस लक्षण को ऊतक क्षय कहते है। ये विभिन्न प्रकार के हो सकते हैं –

(अ) स्पोट या दाग – इस प्रकार के लक्षण में ऊतक क्षय एक निश्चित क्षेत्र में होता है।

(ब) धारी (Streak) – इस प्रकार के लक्षण में ऊतक क्षय पौधे के पत्तियों में शिराओं के मध्य की कोशिकाओं की मृत्यु के कारण प्रकट होते है।

(स) धब्बा या ब्लोच – इस प्रकार के ऊतक क्षय गहरे नहीं होते बल्कि ऊपरी त्वचा तक सीमित होती है।

(द) शीर्ष मृत्यु (Dieback) – इस लक्षण में पौधे शीर्ष भाग से ऊतक मरने लगते है एवं नीचे की ओर बढ़ते हैं।

(2) विगलन – पौधे के विभिन्न भागों के ऊतकों के अपघटन के कारण उनकी कोशिकाऐं अभिकर्मक के कारण टूटने लगती है जिससे उनमें दुर्गन्ध आने लगती है। पौधे के विभिन्न भागों में लक्षण की उपस्थिति के आधार पर जड़, तना, पत्ती, विगलन कहते हैं। नमी की उपस्थिति के आधार पर मृदु एवं शुष्क विगलन कहलाता है। उदाहरण– पपीते का तना विगलन ।

(3) रंग परिवर्तन – रोगजनक की उपस्थिति के कारण पौधे में क्लोराफिल की कमी के लक्षण प्रकट होते है जिसे **हरिमहीनता (Chlorosis)** कहते है। यदि क्लोराफिल की कमी सूर्य के प्रकाश की अनुपस्थिति के कारण होती है तो इसे **पाण्डुरता (Etiolation)** कहते हैं। यदि पौधे के अंगों का रंग हरे के स्थान पर रंगीन होता है तो इसे **रंजकता (Chromosis)** कहते हैं। यदि रोग के प्रभाव के कारण पौधे का हरा रंग रंगहीन हो जाये तो इसे **रंजकहीनता (Albinism)** कहते है।

(4) मोजेक – विषाणु जनित रोगों एवं फाइटोप्लाज्मा सदृश जीव के कारण पौधों के पत्तियों का हरा रंग कम या ज्यादा धब्बों के रूप में दिखाई देता है। इसे मोजेक लक्षण कहते है। इसका कारण प्रकाश संश्लेषण के क्रिया का प्रभावित होना है।

चित्र : 4.7 विषाणु/फाइटोप्लाज्मा जनित रोग

❑

प्रयोग–5

उद्देश्य– प्रादर्शो के माध्यम से पाठ्यक्रम में वर्णित कीटों की बाह्य संरचना का अध्ययन।

आवश्यक सामग्री :– चार्ट / पावर पॉइन्ट प्रजेन्टेशन, विभिन्न प्रकार के पकड़े गए कीट, चिमटी, पेन्सिल, ड्राइंग शीट आदि।

विधि :– अध्यापक द्वारा उपरोक्त में से उपलब्ध विधि द्वारा पकड़े गए कीटों तथा पाठ्यक्रम में वर्णित कीटों के बारे में चित्रों के द्वारा समझाया जाएगा तथा छात्र स्वयं भी पाठ्यक्रम में वर्णित कीटों के बारे में अध्ययन करेंगे तथा प्रयोग–9 में वर्णित कीटों का भी उपयोग इस भाग के लिए किया जा सकता है।

❑

प्रयोग–6

उद्देश्य : प्रमुख पादप रोग कारकों की आन्तरिक संरचना के चित्रों में निर्देशित अंगों की पहचान (कोई अंग/भाग)।

विधि : रोगग्रस्त पादप में रोग का निदान (Diagnosis) उसके रोग लक्षणों की सहायता से हो सकता है, लेकिन केवल देखकर ही किसी रोग के रोगजनक के बारे में अन्तिम निष्कर्ष निकालना उचित नहीं होगा।

हालाँकि कुछ रोगों को रोग के लक्षणों के आधार पर पहचान सकते हैं, परन्तु अधिकतर रोगों के रोगजनक को जानने के लिए प्रयोगशाला में अध्ययन की आवश्यकता पड़ती है। इस हेतु प्रयोगशाला में रोगग्रस्त भाग के महीन अनुप्रस्थ काट (Transverse section = T.S.) या अनुदैर्ध्य काट (Longitudinal section = L.S.) या खुरचकर (Teasing) कुछ टुकड़े स्लाइड़ पर रखे जाते हैं। तत्पश्चात् अभिरंजक (Stain) द्वारा अभिरंजित (Staining) कर सूक्ष्मदर्शी (Microscope) द्वारा पादप के आन्तरिक भागों में रोगजनक के कायिक भागों जैसे – कवक का कवकजाल (Mycelium), बीजाणुओं (Spores) एवं फलनकाय (Fruiting bodies) या जीवाणु की उपस्थिति का पता लगाया जाता है।

रोगग्रस्त पौधों के आन्तरिक भागों में उपस्थित रोगजनक के भागों या रोग के लक्षणों के आधार पर पहचान हेतु प्रयोग :

1. रोग का नाम : बाजरे का मृदुरोमिल आसिता/हरित बाली रोग

रोग के मुख्य लक्षण :

मृदुरोमिल आसिता अवस्था : रोग ग्रस्त पत्तियाँ पीली (Chlorotic) पड़ जाती हैं तथा पौधे बौने रह जाते हैं। रोग ग्रस्त पत्तियों पर पीली–सफेद लम्बी धारियाँ बन जाती हैं तथा ऐसी पत्तियों की निचली सतह पर धारियों के नीचे सफेद धूसर रंग की फफूंद की मृदुरोमिल वृद्धि (Downy mildew growth) दिखाई देती है। बाद में ये धारियाँ भूरी पड़ जाती हैं। ग्रसित पत्तियाँ ऐंठी हुई तथा झुर्री लिए दिखाई पड़ती हैं।

हरित बाली अवस्था : इस अवस्था के लक्षण पुष्पक्रम पर दिखाई पड़ते हैं। रोगी पौधों पर या तो बालियाँ बनती ही नहीं और यदि बनती है तो बाली के सभी या निचला कुछ हिस्सा ''पत्तियों – जैसी संरचनाओं'' (Leaf-like structures) में बदल जाता है। इसी कारण इसे ''हरित बाली रोग'' के नाम से जाना जाता है।

रोगजनक : *स्क्लेरोस्पोरा ग्रेमिनिकोला* (*Sclerospora graminicola*)

रोगजनक की पहचान :

(i) कवकजाल (Mycelium) : कवकजाल शाखित, काचाभ (Hyaline), संकोशिकी (Coenocytic) तथा अन्तरकोशिकीय (Intercellular) होता है।

(ii) बीजाणुधानीधर (Sporangiophore) : यह काचाभ, मजबूत एवं ऊपरी सिरे पर द्वि–या त्रि–भाजित (Di-or Trichotomous) होता है, जिन पर बीजाणुधानी बनती है।

(iii) बीजाणुधानी (Sporangia) : यह दीर्घवृत्ताकार, काचाभ एवं पैपिलामय (Papillate) होती हैं, जिसमें सेम के बीज–जैसे (Bean shaped), द्वि–कशाभिक (Biflagellated) अलैंगिक चलबीजाणु (Zoospores) बनते हैं।

(iv) निषिक्तांड (Oospore) : यह लैंगिक जनन द्वारा उत्पन्न, लैंगिक बीजाणु है जो गोलाकार, मजबूत एवं पीत–भूरे रंग का होता है।

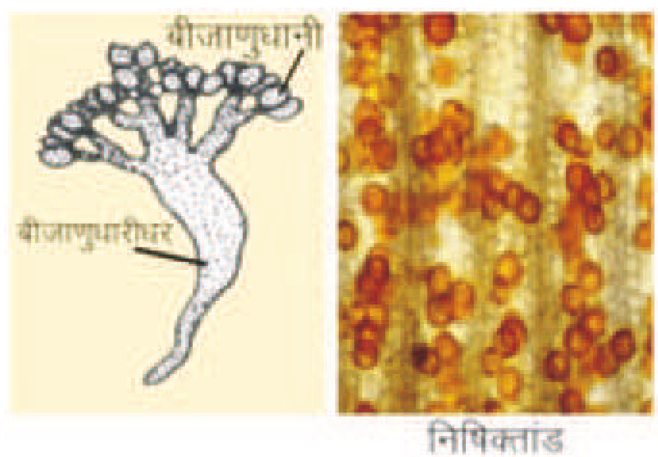

चित्र 6.1 : स्क्लेरोस्पोरा ग्रेमिनिकोला के बीजाणुधानी, बीजाणुधारीधर एवं निषिक्तांड

2. रोग का नाम : गेहूँ का रोली रोग (Rust of wheat)

रोग के मुख्य लक्षण : गेहूँ पर तीन प्रकार के रोली रोगों का प्रकोप होता है :

(क) काली रोली : पौधे के तना, पत्तियों तथा पर्णाच्छदों (Leaf sheath) पर लम्बे लाल–भूरे रंग के स्फोट (Pustule) बनते हैं, जो शीघ्र फट जाते हैं। बाद में यह स्फोट काले रंग मे बदल जाते हैं (चित्र 6.2 क)।

(ख) भूरी रोली : ग्रसित पत्तियों पर छोटे अण्डाकार भूरे रंग के स्फोट बनते हैं जो शीघ्र फट जाते हैं (चित्र 6.2 ख)।

(ग) पीली रोली : रोगग्रस्त पत्तियों पर पीत रंग के छोटे–छोटे अण्डाकार स्फोट बनते हैं जो धारियों में व्यवस्थित होते हैं (चित्र 6.2 ग)।

रोगजनक :

(क) काली रोली – *पक्सीनिया ग्रेमिनिस ट्रिटीसाई* (*Puccinia graminis tritici*)।

(ख) भूरी रोली – *पक्सीनिया रिकॉन्डिटा* (*Puccinia recondita*)।

(ग) पीली रोली – *पक्सीनिया स्ट्राइफोर्मिस* (*Puccinia striiformis*)।

रोगजनक की पहचान :

(i) कवकजाल (Mycelium) : कवकजाल शाखित, पटयुक्त, अन्तरकोशिकीय तथा द्वि–केन्द्रकी (Dikaryotic) होता है।

(ii) बीजाणु (Spores) : पक्सीनिया के जीवन–चक्र में निम्न पाँच विभिन्न प्रकार के बीजाणु बनते हैं–

(क) स्परमेशिया (Spermatia)

(ख) एसियोबीजाणु (Aeciospores)

(ग) यूरेडियोबीजाणु (Urediospores)

(घ) टिलियोबीजाणु (Teliospores) एवं

(च) बेसिडियोबीजाणु (Basidiospores)

यूरेडियोबीजाणु एक–कोशिकीय, अण्डाकार, द्वि–केन्द्रकी तथा भूरे रंग के होते हैं (चित्र 6.2 घ), जबकि टिलियोबीजाणु द्वि–कोशिकीय, तर्कुरूपी तथा गहरे भूरे रंग के होते हैं (चित्र 6.2 च)।

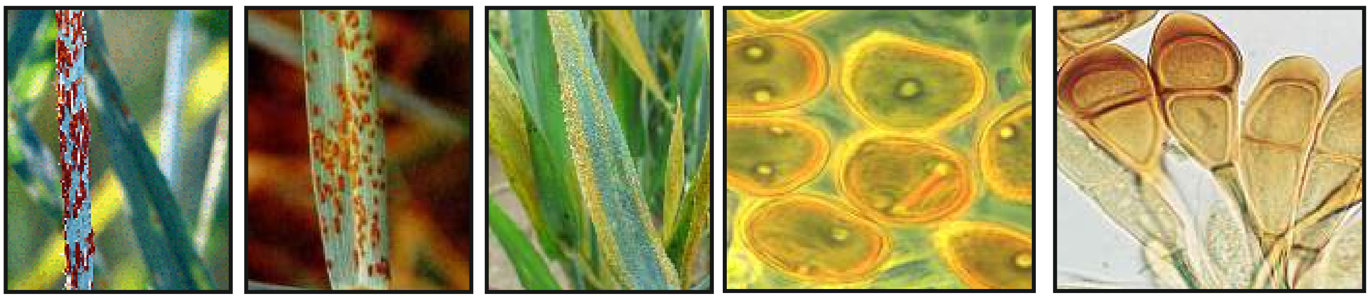

(क) (ख) (ग) (घ) (च)

चित्र 6.2 : गेहूँ का रोली रोग – (क) काली रोली (ख) भूरी रोली (ग) पीली रोली (घ) यूरेडियोबीजाणु (च) टीलियोबीजाणु

3. रोग का नाम : मूँगफली का पर्णचित्ति (टिक्का) रोग।

रोग के लक्षण : रोग प्रकट होने के समय के आधार पर, लक्षणों को दो भागों में बाँटा जा सकता है– (i) अगेती पत्ती धब्बा रोग (Early leaf spot) एवं (ii) पछेती पत्ती धब्बा रोग (Late leaf spot)। अगेती व पछेती पत्ती धब्बा रोगों का तुलनात्मक विवरण निम्न प्रकार है –

गुण	अगेती पत्ती धब्बा रोग	पछेती पत्ती धब्बा रोग
(1) धब्बे उत्पन्न होने का समय	इस रोग में धब्बे 3 –4 सप्ताह के पौधों पर प्रकट हो जाते हैं। धब्बे जल्दी प्रकट होने के कारण ही इसे अगे ती पत्ती धब्बा रोग कहते हैं।	इसमें धब्बे 6 –8 सप्ताह के पौधों पर प्रकट होते हैं। इसी कारण इसे पछेती पत्ती धब्बा रोग कहते हैं।
(2) धब्बों का आकार (Shape)	धब्बे अनियमित आकार के हाते हैं।	सामान्यतः धब्बे गोलाकार होते हैं।
(3) धब्बों का रंग व पीला घेरा (Yellow halo)	पत्ती की ऊपरी सतह पर लाल–भूरे से काले रंग के धब्बे बनते हैं जो पीले घेरे से घिरे (Yellow halo) होते हैं।	पत्ती की सतह पर गहरे–भूरे से काले रंग के धब्बे बनते हैं जिनके चारों ओर पीला घेरा (Yellow halo) नहीं होता है।
(4) धब्बों की संख्या तथा आकार (Size)	धब्बे कम तथा आकार में बड़े होते हैं जिनका व्यास 1–10 मि.मी. होता है।	धब्बे अधिक तथा छोटे होते हैं जिनका व्यास 1–6 मि.मी. होता है।
(5) हानिकारक प्रभाव	यह कम हानिकारक होता है।	यह अधिक हानिकारक होता हैं क्योंकि धब्बे ज्यादा व तीव्र गति से बनते हैं।
(6) रोगजनक कवक	सर्कोस्पोरा अरेकिडीकोला (*Cercospora arachidicola*)	सर्कोस्पोरिडियम परसोनेटम (*Cercosporidium personatum*)

रोगजनक :

सर्कोस्पोरा अरेकिड़ीकोला (अगेती पर्ण चित्ति)

सर्कोस्पोरिडियम परसोनेटम (पछेती पर्ण चित्ति)

रोगजनक की पहचान :

(क) कवकजाल (Mycelium) : कवकजाल अन्तर–कोशिकीय एवं अन्तःकोशिकीय, पटयुक्त व शाखित होता है।

(ख) कोनिडियोधर (Conidiophore) : यह जैतूनी भूरे रंग के पटहीन या एक–दो पटयुक्त एवं जानुनत (Geniculate) होते हैं।

(ग) कोनिडिया (Conidia) : सामान्यतः यह हल्के पीले रंग के, 4–12 पटयुक्त, लम्बे एवं नुकीले सिरे वाले (स. अरेकिड़ीकोला) होते हैं, लेकिन स. परसोनेटम में 1 से 7 पटयुक्त, छोटे एवं कुन्द गोल (Blunty round) सिरे वाले होते हैं।

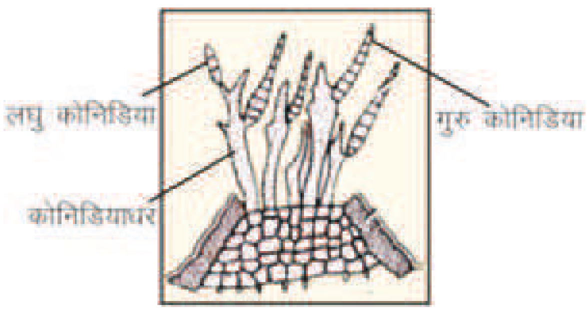

4. रोग का नाम : टमाटर का अगेती झुलसा रोग।

रोग के लक्षण :

पत्तियों पर गोलाकार या कोणीय, हल्के भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जो पीले घेरे (Yellow halo) से घिरे होते हैं। पुराने गहरे रंग के धब्बों में गोल चक्कर बनाती हुई हल्के रंग की ''संकेन्द्रीय लाइनें'' दिखाई पड़ती हैं, जिससे ''लक्ष्य पट्ट प्रभाव'' (Target board effect) प्रकट होता है। बाद में धब्बे फैलकर आपस में मिल जाते हैं, जिससे पत्तियाँ झुलसी हुई नजर आती हैं। धब्बे पर्णवृन्त तथा तने पर भी बन जाते हैं। फलों पर संक्रमण से फल सड़ जाते हैं तथा उपज में भारी कमी आ जाती है।

रोगजनक : *ऑल्टरनेरिया सोलेनाई।*

रोगजनक की पहचान :

(क) कवकजाल (Mycelium) : कवकजाल पटयुक्त, शाखित, हल्के भूरे रंग के, अन्तरकोशिकीय एवं अन्तःकोशिकीय होता है।

(ख) कोनिडियोधर (Conidiophore) : यह छोटे, पटयुक्त तथा हल्के भूरे रंग के होते हैं।

(ग) कोनिडिया (Conidia) : यह चोंचदार (Beaked), गदाकार (Club-shaped), म्यूरीफॉर्म (Muriform), गहरे रंग के होते हैं। प्रत्येक कोनिडिया में 5 से 10 तक आडे पट (Transverse septa) एवं एक से पाँच तक खड़े पट (Longitudinal septa) होते हैं, जिनके कारण इनको म्यूरीफॉम कोनिडिया कहते हैं।

5. रोग का नाम : कपास का जीवाणु जनित अंगमारी रोग

रोग के लक्षण : रोगजनक, जड़ के अलावा, पौधों के सभी भागों पर संक्रमण करता है तथा पौधे के कौनसे भाग पर किस तरह के लक्षण प्रकट हो रहे हैं, के आधार पर इस रोग को चार अवस्थाओं में बाँटा जा सकता है –

(i) नवजात पादप अंगमारी : नवजात पौधों के बीजपत्रों (Cotyledons) पर जलासिक्त धब्बे (Water soaked spots) बनते हैं जो बाद में बड़े होकर भूरे से काले रंग में बदल जाते हैं। यह धब्बे नई पत्तियों पर भी फैल जाते हैं जिससे पौधा मुरझाकर सूख जाता है।

(ii) कोणीय अंगमारी : परिपक्व पौधों की पत्तियों पर भी जलासिक्त धब्बे प्रकट होते हैं, जो कोणीय हो जाते हैं तथा सूक्ष्म शिराओं द्वारा घिरे रहते हैं। यह धब्बे भूरे से काले रंग में बदल जाते हैं।

(iii) काली भुजा अवस्था : तना व शाखाओं पर गहरे भूरे से काले, रेखीये धँसे हुए धब्बे प्रकट होते हैं जो तना व शाखाओं के चारों ओर घेरा (Girdle) बना लेते हैं, जिसके कारण पत्तियाँ

झड़ जाती है तथा स्वस्थ शाखाओं की जगह सूखी हुई काली टहनियाँ या काली भुजा (Black arm) दिखाई देती है।

(iv) डोडा/बॉल सड़न अवस्था : बॉल पर भी जलासिक्त धब्बे बनते हैं जो बाद में गहरे भूरे से काले धँसे हुए धब्बों में बदल जाते हैं। इस प्रकार के धब्बों का असर बॉल में गहराई तक फैल जाता है और रेशों (Lint) तथा बीजों को संक्रमित कर खराब कर देता है जिससे रूई की गुणवत्ता खराब हो जाती है।

रोगजनक :

जैन्थोमोनास अक्जोनोपोडिस पैथोवार मालवेसीएरम (*Xanthomonas axonopodis* pv. *malvacearum*)।

रोगजनक की पहचान :

जीवाणु कोशिकाएँ छड़ाकार (Rod-shaped), एकल कशाभिक (Monotrichous), ग्राम–अग्राही (Gram negative) एवं वायवीय होती हैं। माध्यम (Medium) पर हल्की पीली, गोल, चिकनी एवं चमकीली कॉलोनी बनाता है।

***जैन्थोमोनास* जीवाणु कोशिका**

6. रोग का नाम : भिण्डी का पीत शिरा मोजेक रोग

रोग के लक्षण : रोगग्रस्त पौधों की पत्तियों पर पीली शिराओं का जाल (Network of yellow veins) बन जाता है तथा शिराएँ मोटी हो जाती है। उग्र अवस्था में पूरी पत्ती पीली हो जाती है। क्लोरोफिल नष्ट होने (Chlorosis) से प्रकाश संश्लेषण की क्रिया धीमी हो जाती है। फल छोटे, विकृत तथा पीलापन लिए हुए होते हैं, जिसके कारण उपज में भारी कमी आ जाती है।

रोगजनक : इसका रोगकारक "भिण्डी पीत शिरा मोजेक विषाणु" (Bhendi yellow vein mosaic virus) है।

रोगजनक की पहचान : विषाणुओं को केवल इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी की सहायता से ही देखा जा सकता है। यह विषाणु वंश – *बीगोमोवायरस* (*Begomovirus*), कुल – *जैमीनीविरिडी* (*Geminiviridae*) के अन्तर्गत आता है।

इस विषाणु में एकसूत्रीय डी.एन.ए. (ssDNA) आनुवंशिक पदार्थ होता है जो जुड़वा समपार्श्विक कणों (Twin icosahedral particles) के रूप में रहते हैं।

इन विषाणुओं का माप 15-22 nm व्यास का होता है तथा ये सफेद मक्खी (*Bemisia tabaci*) के द्वारा संचरित होते हैं।

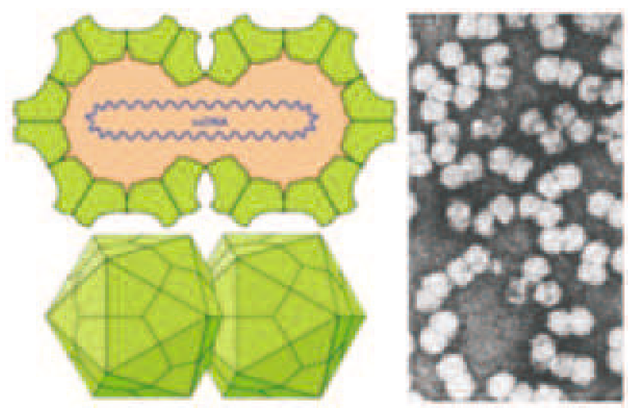

जेमिनेट विषाणु कण (जेमिनिवायरस)

❑

प्रयोग–7

उद्देश्य– दिये गये चित्र/सजीव प्रारूप को पहचान कर निमेटोड जनित रोग, लक्षण, रोग कारक का वर्णन कीजिए।

परिचय– पादप परजीवी सूत्रकृमि अविकल्पी परजीवी होते हैं। अतः इन्हें अपनी विभिन्न जैविक क्रियाएं करने हेतु जीवित पादप सामग्री की आवश्यकता पडती हैं, जिसके कारण पौधों में अनेक शरीर क्रियात्मक परिवर्तन आ जाते हैं जो लक्षणों के रूप में प्रदर्शित होते हैं। सामान्यत सूत्रकृमि प्रभावित पौधों में निम्न लक्षण प्रदर्शित होते हैं।

1. पौधों में ओज की कमी दिखाई देती है।
2. दिन के समय पौधे मुरझाये हुए दिखाई देते हैं।
3. पौधों में हरिमहीनता के लक्षण प्रकट होते हैं।
4. पौधों की वृद्धि प्रभावित होती हैं तथा पौधे बौने दिखाई देते हैं।
5. पौधों में बनने वाले फल, पत्तियों का आकार छोटा रह जाता हैं।

1. गेहूँ का सेहू रोग (Ear Cockle of Wheat)

रोग जनक– *एंग्विना टिट्रिसाई (Anguina tritici)*

रोग लक्षण–

1. संक्रमित पौधे के आधारिय भाग में सूजन दिखाई देती हैं।
2. पत्तियाँ मुडी–तुडी व सुखी हुई दिखाई देती हैं।
3. संक्रमित पौधे बौने रह जाते हैं व शीघ्र मर जाते हैं।
4. संक्रमित बाली आकार में छोटी रह जाती है।
5. बाली में दाने के स्थान पर कॉकल्स दिखाई देते हैं, संक्रमित गेहूँ के दाने छोटे, गहरे भूरे रंग के दिखाई देते हैं।
6. संक्रमित बीज स्वस्थ बीजों से हल्के दिखाई देते हैं।

रोगजनक की पहचान– सूत्रकृमि प्रायः कुण्डिली रूप में मुडे रहते हैं। मुख पर घुंडीनुमा स्टाइलेट (चूषक) पाया जाता हैं व पूँछ कोनोइड होती हैं।

चित्र–7.1 एग्विना टिट्रिसाई से संक्रमित बाली

2. गेहूँ का टुंडू रोग (Yellow Ear Rot of Wheat)–

रोगजनक : यह एक जटिल रोग हैं जो *एंग्विना टिट्रिसाई* एवं *रेथाइबेक्टर टिट्रिसाई* द्वारा फैलता हैं।

टुंडू रोग के लक्षण–

1. नवजात पौधे के पत्ती की सतह पर हल्के पीलें रंग का गोन्द जैसा पदार्थ दिखाई देता हैं।
2. पौधों की बाली पूर्ण रूप से जीवाणुवीय अपवंक में परिवर्तित हो जाते हैं।
3. यह रोग अधिक नमी वाले क्षेत्रों में अधिक प्रकट होते हैं।

चित्र– 7.2 टून्डू रोग से संक्रमित बालियाँ

3. मूल गाँठ सूत्रकृमि रोग (Root Knot Nematode Disease)–

रोगजनक– *मिलोइडोगाइनी प्रजाति (Meloidogyne sp)*

रोग लक्षण–

1. पौधों के ऊपरी सतह पर सूखा व पोषक तत्वों की कमी नजर आती हैं।
2. पौधे बौने रह जाते हैं।
3. पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं।
4. पोषक तत्व एवं पानी की पर्याप्त आपूर्ति होने पर भी पौधे दिन के समय मुरझा जाते है।
5. संक्रमित पौधों की जड़ों में पार्श्विक वृद्धि देखी जाती हैं।
6. संक्रमित पौधों को आसानी से उखाडा जा सकता हैं।
7. पौधों की जड़ों पर गांठे उपस्थित होती हैं तथा भविष्य में भी दिखाई देती हैं।

रोग जनक की पहचान–

परिपक्व मादा नाशपती के आकार की होती हैं जिसमें छोटी सी गर्दन भी होती हैं। द्वितीय अवस्थीय संक्रमणकारी

लारवा, वर्मी रूप, गतिशील सीधे या हल्का मुडे हुए होते है।

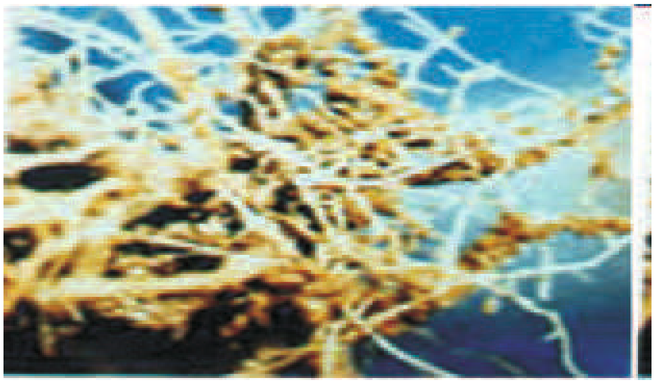

चित्र–7.3 मूल गाँठ रोग के लक्षण

4. गेहूँ का मौल्या रोग (Molya Disease of Wheat)–

रोगजनक– *हैंटेरोडेरा एवेनी (Heterodera avenae)*

लक्षण–

1. यह रोग संक्रमित प्रक्षेत्र में बिखरी हुई अवस्था में पाया जाता हैं।
2. पौधे बौने रह जाते हैं तथा पत्तियाँ हरिमहीनता प्रदर्शित करती हैं।
3. पत्तियाँ सख्त, पतली व संकरी पर्णफलक युक्त होती है
4. संक्रमित पौधे में दौजियां कम निकलती हैं तथा पुष्पन समय से पूर्व होने लगता हैं।
5. बालियों का आकार छोटा रहता हैं तथा उसमें दानों की संख्या कम बनती हैं।
6. पौधों की जड़ों पर नींबू के आकार के पुटी दिखाई देते हैं जो परिपक्व होने पर भूरे से गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं।

रोगजनक की पहचान–

परिपक्व मादा व पुटि नींबू की आकृति के होते हैं जो कठोर भित्ति युक्त पुटी में परिवर्तित हो जाते हैं। परिपक्व होने पर पुटी भूरे से काले रंग की हो जाती हैं।

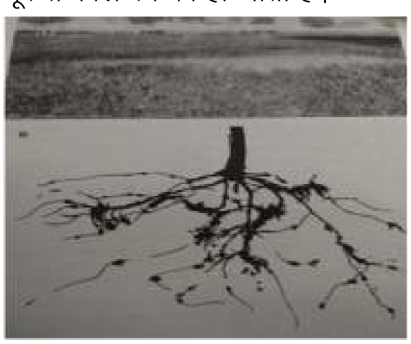

चित्र– 7.4 मोल्या रोग से प्रभावित क्षेत्र व जड़

प्रयोग–8

उद्देश्य– कीटनाशी एवं रोगनाशी रसायनों के विलयनों में सान्द्रता की गणना।

बाजार में मिलने वाले कीटनाशी एवं रोगनाशी रसायनों के विलयनों की सान्द्रता भिन्न–भिन्न होती है। इन रसायनों को प्रयोग करने से पूर्व उनका मंदीकरण किया जाता है ताकि इनका प्रसार यंत्रों द्वारा भलीभाँति उपयोग किया जा सके। इन रसायनों की सान्द्रता अलग–अलग कीटों के लिए भिन्न होती है। अतः रसायनों के विलयनों की सान्द्रता की गणना हेतु कुछ प्रमुख सूत्रों को काम में लिया जाता है।

उदाहरण–

इमल्शन का प्रयोग– यदि एक हैक्टेयर तिल की फसल पर क्विनालफॉस का 0.05 प्रतिशत (सक्रिय) घोल 500 लीटर प्रति हैक्टेयर दर से छिड़कना हो तो बाजार में उपलब्ध इसकी 25 ई.सी. कीटनाशी की कितनी मात्रा की आवश्यकता होगी ?

(अ) सूत्र से –

$$\text{घुलनशील इमल्शन या घुलनशील चूर्ण की आवश्यक मात्रा} = \frac{\text{घोल की सांद्रता (\%) X घोल की कुल मात्रा (लीटर)}}{\text{घुलनशील इमल्शन या घुलनशील चूर्ण की उपलब्ध शक्ति (\%)}}$$

अतः क्विनालफॉस 25 ई.सी. की मात्रा =

$$\frac{0.05 \text{ x } 500}{25} = 1.0 \text{ लीटर}$$

(ब) समीकरण द्वारा –

$$S1V1 = S2V2$$

अर्थात् S1 = दवा की शक्ति (%)

V1 = दवा की आवश्यक मात्रा (लीटर)

S2 = घोल की शक्ति (%)

V2 = घोल का आयतन (लीटर)

अतः दवा की आवश्यक मात्रा =

$$\frac{\text{घोल का आयतन x घोल की शक्ति (\%)}}{\text{उपलब्ध दवा की शक्ति (\%)}}$$

क्विनालफॉस 25 ई.सी. की मात्रा =

$$\frac{0.05 \text{ x } 500}{25} = 1.0 \text{ लीटर}$$

घोल की सांद्रता निकालना– यदि कार्बेण्डाजिम 50 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण की 2.0 किलोग्राम मात्रा 1000 लीटर पानी

में घोली गई हो तो घोल की सांद्रता होगी ? ज्ञात करिए।

सूत्र से–

बने हुए घोल की सांद्रता (%) =

$$\frac{\text{कीटनाशी की मात्रा (कि.ग्रा./ली.) x घोल की शक्ति (\%)}}{\text{बने हुए घोल की मात्रा (लीटर)}}$$

अतः घोल की सांद्रता = $\frac{2.0 \times 50}{1000} = \frac{100}{1000} = 0.1\%$

इस प्रकार कीटनाशी दवाओं का मंदीकरण विधि द्वारा घोल बनाकर उनका समुचित प्रयोग कर सकते हैं।

आंकिक प्रश्न :

1. यदि 0.05 प्रतिशत सांद्रता का 100 लीटर घोल बनाना है तो इथियान 50 ई.सी. की कितनी मात्रा की आवश्यकता होगी ? ज्ञात कीजिए।
2. एसीफेट 50 घुलनशील चूर्ण के 250 ग्राम कीटनाशक से 0. 1 प्रतिशत सांद्रता का कितना घोल तैयार कर सकते हैं ?
3. एक हैक्टेयर ग्वार की फसल पर कॉपर–ऑक्सीक्लोराइड 50 घुलनशील चूर्ण का 500 लीटर घोल 0.25 प्रतिशत शक्ति का छिड़काव ग्वार की बीमारी के नियंत्रण हेतु करना है तो कापर–ऑक्सीक्लोराइड की मात्रा ज्ञात कीजिए।

प्रयोग–9.1

(प्रादर्श (Spot))

उद्देश्य– विषाणु/जीवाणु/फाइटोप्लाज्मा जनित रोग प्रादर्शों का अध्ययन।

विषाणु, जीवाणु एवं फाइटोप्लाज्मा द्वारा जनित पादप रोगों को हम कुछ प्रमुख एवं विशेष लक्षणों के आधार पर पहचान सकते हैं। इनके द्वारा उत्पन्न महत्त्वपूर्ण रोगों के प्रमुख लक्षण निम्न प्रकार के हो सकते हैं :

(क) विषाणु द्वारा उत्पन्न लक्षण :

(i) मोजेक (Mosaic) : जब सामान्य हरे ऊतकों के साथ–साथ विभिन्न प्रकार के हल्के हरे या पीले धब्बों का पत्ती पर अनियमित रूप से बिखराव हो, तब चितेरी या मोजेक कहलाता है। उदाहरण – तम्बाकू का मोजेक रोग।

(ii) शिरा–उद्भासन (Vein-clearing) : शिराओं के आस–पास का पर्णहरित नष्ट होना शिरा–उद्भासन कहलाता है।

(iii) शिरापट्टन (Vein-banding) : शिराओं के साथ–साथ हरिमाहीन ऊतकों की चौड़ी पट्टियों का बनना शिरापट्टन कहलाता है।

(iv) वृद्धिरोधन (Stunting) : अधिकांश विषाणु जनित रोगों के कारण पौधों की वृद्धि रूक जाती है तथा पौधे छोटे या बौने रह जाते हैं।

(v) पर्णकुंचन (Leaf curling) : पत्तियों के किनारे ऊपर या नीचे की तरफ मुड़ कर कप का आकार (Cupping) लेकर, पत्तियाँ छोटी एवं विकृत हो जाती हैं।

(ख) जीवाणु द्वारा उत्पन्न लक्षण :

(i) निपंक (Oozing) : पौधों के ग्रसित भागों की सतह पर, जीवाणु कोशिकाओं का समूह, एक चिपचिपे स्राव के रूप में नजर आता है जिसे निपंक या ऊजिंग कहते हैं।

(ii) अंगमारी (Blight) : ग्रसित भाग पर हल्के भूरे रंग के जलासिक्त धब्बों का बनना जीवाणु अंगमारी की एक विशेष पहचान है।

(ग) फाइटोप्लाज्मा जनित लक्षण :

(i) फाइलोडी (Phyllody) : पुष्पीय भागों का पत्ती–सदृश संरचना (Leaf-like structure) में परिवर्तन फाइलोडी कहलाता है। उदाहरण – तिल का फाइलोडी रोग।

(ii) पीलापन (Yellowing) : पौधों का रंग सामान्य हरा

न रहकर पीला हो जाता है।

(iii) लघु पत्ती (Little leaf) : ग्रसित पौधों की पत्तियाँ छोटी, संकीर्ण एवं तने से चिपकी हुई दिखाई पड़ना।

कुछ महत्त्वपूर्ण पादप रोग प्रादर्शों का सामान्य परिचय निम्न प्रकार है –

(1) रोग का नाम : टमाटर का पर्णकुंचन रोग (Leaf curl of tomato)

रोगकारक : टमाटर पर्ण कुंचन विषाणु (Tomato leaf curl virus)।

रोगवाहक : सफेद मक्खी (*Bemisia tabaci*)।

प्रबन्धन : रोगी पौधों को नष्ट करना, समय पर सर्वांगी कीटनाशक का छिड़काव करना तथा रोगरोधी किस्मों का उपयोग करना।

(2) रोग का नाम : भिण्डी का पीत शिरा मोजेक रोग (Yellow vein mosaic of okra)

रोगकारक : भिण्डी पीत शिरा मोजेक विषाणु (Bhendi yellow vein mosaic virus)।

रोगवाहक : सफेद मक्खी (*Bemisia tabaci*)।

प्रबन्धन : रोगी पौधों को नष्ट करना, समय पर सर्वांगी कीटनाशक का छिड़काव करना तथा रोगरोधी किस्मों का उपयोग करना।

(3) रोग का नाम : मूँगफली का विषाणु गुच्छा रोग (Peanut clump virus disease)

रोगकारक : इन्डियन पीनट कलम्प वायरस (Indian peanut clump virus)।

रोगवाहक : *पोलीमिक्सा ग्रेमिनिस* (*Polymyxa graminis*) नामक कवक।

प्रबन्धन : फसल चक्र अपनाना, ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करना, भूमि में कवकनाशी का उपयोग एवं रोगरोधी किस्मों का प्रयोग करना।

(4) रोग का नाम : नींबू का कैंकर रोग (Citrus canker)

रोगजनक : *जैन्थोमोनास कम्पेस्ट्रिस पैथोवर सिट्राई* (*Xanthomonas campestris* pv. *citri*)।

उत्तरजीविता : जीवाणु रोगी पौधों पर जीवित रहता है तथा लीफ माइनर द्वारा भी फैलाया जाता है।

प्रबन्धन : रोग ग्रस्त भागों को नष्ट करना एवं जीवाणुनाशक एन्टीबायोटिक का उपयोग करना।

(5) **रोग का नाम :** कपास का जीवाणु जनित अंगमारी रोग।

कपास का जीवाणु जनित अंगमारी रोग (क) कोणीय धब्बा अवस्था (ख) काली भुजा अवस्था (ग) बॉल सड़न अवस्था

रोगजनक : *जैन्थोमोनास अक्जोनोपोडिस पैथोवर मालवेसिएरम।*

उत्तरजीविता : यह जीवाणु मृदा एवं बीजों में जीवित रहता है।

प्रबन्धन : फसल चक्र, ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई, बीजोपचार एवं एन्टीबायोटिक का छिड़काव करना।

(6) **रोग का नाम :** बैंगन का लघुपत्ती रोग (Little leaf of brinjal)

रोगजनक : *केन्डीडेटस फाइटोप्लाज्मा* (*Ca.* Phytoplasma)

उत्तरवाहक : पात फुदका कीट (Leaf hopper)

प्रबन्धन : रोगी पौधों को नष्ट करना, समय पर सर्वांगी कीटनाशी का छिड़काव करना एवं रोगरोधी किस्मों का उपयोग करना।

प्रयोग–9.2
(प्रादर्श (Spot))

उद्देश्य– मधुमक्खी/रेशम कीट/लाख कीट/दीमक के जीवन चक्र का अध्ययन।

(अ) मधुमक्खी :

वैज्ञानिक नाम : *एफिस इंडिका* (*Aphis indica* L.)

गण : हाइमेनोप्टेरा (Hymenoptera)

कुल : एपिडि (Apidae)

जीवन चक्र (Life cycle) : मधुमक्खियाँ समूह (Colony) बनाकर परिवार में रहती हैं। एक समूह में एक रानी 200 से 300 नर (Drone) तथा शेष श्रमिक (Worker) होते हैं।

रानी (Queen) – इसका कार्य अण्डे देना होता है। इसका जीवन काल 2 से 5 वर्ष का होता है। निषेचित अण्डों से श्रमिक, रानी पुत्रियाँ (Daughter queen) एवं अनिषेचित अण्डे से सदैव नर उत्पन्न होते हैं। रानी माता लगभग 15–20 मि.मी. लम्बी होती है। प्रतिदिन 2 से लेकर 2,000 तक अण्डे तथा अपने पूरे जीवन में लगभग 15 लाख अण्डे देती है।

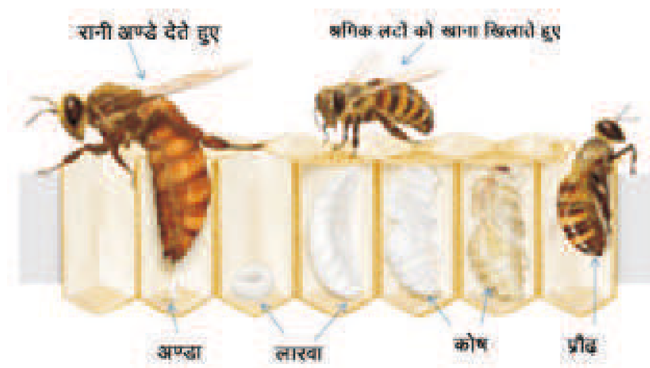

चित्र 9.2.1 : मधुमक्खी का जीवन चक्र

नर (Drone)– नर, रानी से आकार में छोटे लगभग 15 से 17 मि.मी. लम्बे होते हैं। इनकी आँखे बड़ी, उदर गोल तथा काला, जननांग भली–भाँति विकसित तथा मोम ग्रन्थि, पराग थैली और डंक अनुपस्थित होते हैं। इनका मुख्य कार्य रानी के साथ मैथुन करना है।

श्रमिक (Worker)– ये निषेचित अण्डों से निकलती हुई मादायें हैं, जिन्हें रायल जेली खाने को बहुत कम मिलती है जिससे यह बाँझ रह जाती हैं। श्रमिक मधुमक्खियों का कार्य बाहर फूलयुक्त पौधों की खोज तथा पराग इक्ट्ठा करना होता है।

मैथुन–उड़ान (Nuptial flight)– रानी पुत्री दो या तीन दिन पश्चात् दिन में ही मैथुन के लिये उड़ान भरती है। बचा हुआ एक नर रानी पुत्री से सम्भोग करता है। नर से प्राप्त वीर्य शुक्रधानी (Spermatheca) में इकट्ठा रहता है जिसे रानी माता आवश्यकतानुसार प्रयोग करती है।

अण्डनिक्षेपण (Oviposition)– कुछ समय पश्चात् रानी–पुत्री अण्डा देना आरम्भ करती है। एक कोष्ठ में एक ही अण्डा दिया जाता है। इसके अण्डें लम्बे, पतले, अण्डाकार तथा हल्के पीले रंग के होते हैं।

ग्रब (Grub) – यह पतला, लम्बा तथा हल्के पीले रंग का होता है श्रमिक मधुमक्खियाँ इसे खाने में 2–3 दिनों तक रायल जेली देती हैं। इसके पश्चात् पराग और मधु देती हैं, परंतु जिस ग्रब को रानी–पुत्री बनाना होता है उन्हें 2–3 दिन और रायल जेली खाने को दी जाती है। इन 5–6 दिनों में ग्रब पूर्ण विकसित होकर कोषावस्था में बदलते हैं।

कोष (Pupa)– ग्रब पूर्ण विकसित होने पर अपने चारों ओर एक कोया बनाकर उसके अन्दर कोषावस्था में बदलता है। कोषावस्था 7–14 दिन की होती है इसके पश्चात् इनसे प्रौढ़ निकलते हैं।

(ब) रेशम कीट :

वैज्ञानिक नाम : *बॉम्बीक्स मोराई* (*Bombyx mori* L.)

गण : लेपिडोप्टेरा (Lepidoptera)

कुल : बॉम्बीसाइडी (Bombycidae)

जीवन चक्र (Life cycle)– रेशम का कीट एक शलभ (Moth) है जो लगभग 30 मि.मी. लम्बा तथा पंख विस्तार 40 से 50 मि.मी. एवं इसका रंग पीताभी श्वेत (Creamy white) होता है। नर मादा की अपेक्षा छोटा होता है। सिर छोटा, एक जोड़ी गोल, काले संयुक्त नेत्र तथा द्विकंघाकार (Bipectinate) एण्टिनी होते हैं। मुखांग अक्रियाशील होते हैं, फलतः प्रौढ़ कुछ खाते नहीं तथा 2–7 दिन ही जीवित रहते हैं। वक्ष आगे की ओर पतला और पीछे की ओर चौड़ा होता है। अगली जोड़ी पंखों पर कुछ मटीले रंग की भद्दी तिरछी शिराएँ होती हैं तथा उदर 8 से 9 खंडों का एवं मोटा होता है। प्रौढ़ का सारा शरीर रोमों से ढका होता है। नर तथा मादा कीट उदर की नोक से नोक सटाकर विपरीत दिशाओं की ओर मुँह करके मैथुन करते हैं तथा निषेचन (Fertilization) मादा के अन्दर होता है। इस में पूर्ण कायान्तरण (Complete metamorphosis) होता है।

चित्र 9.2.2 : रेशम कीट का जीवन चक्र

अण्डा (Egg) : मादा रात्रि में अण्डे देती है। मादा एक बार में लगभग 300–400 अण्डे देती है। प्रत्येक अण्डा, चपटा, गोलाकार सफेद रंग का होता है जो पकने पर भूरे काले रंग का हो जाता है। अण्डे फूटने का समय गर्मियों में 10–12 दिन तथा सर्दियों में लगभग 30 दिन का होता है।

सूंडी (Caterpillar) : अंडे से निकलने वाली सूंडी लगभग 3 मिमी. लम्बी सलेटी रंग की होती है। इसके मुखांग काटने–चबाने वाले होते हैं। वक्ष में 3 टांगें तथा उदर में 5 जोड़ी टांगें जो क्रमशः 3,4,5,6 और 10वें खण्ड पर स्थित होती हैं। सूंडी अंडे से निकलने के पश्चात शहतूत की पत्तियाँ खाना आरम्भ कर देती है तथा 4–5 दिन बाद शिथिल होकर प्रथम निर्मोचन करती है। इस प्रकार इसमें चार बार त्वचा निर्मोचन होता है और पूर्ण विकसित सूंडी लगभग 75 मि.मी. लम्बी होती है। सूंडी का जीवनकाल प्रायः 30–35 दिन का होता है। पाँचवें इन्सटार की सूंडी मिकोष में बदलने से पहले कोया (Cocoon) बनाना शुरू करती है, कोया बाहर से अन्दर की ओर बुना जाता है। यह अपने वजन से 30000 गुणा पत्तियाँ खा लेती है।

मिकोष (Pupa) : इसका कोया अण्डाकार सफेद अथवा पीले रंग का होता है इसी के अन्दर सूंडी कोषावस्था में बदलती है। कोया एक ही धागे का बना होता है। यह 15 सेमी. धागा प्रति मिनट के हिसाब से बुनती है। इस प्रकार 3–4 दिनों में यह लगभग 1 हजार मीटर धागा बुनती है। मिकोष लगभग 2.5 सेमी. लम्बा, 7 सेमी. चौड़ा लाल भूरे रंग का होता है। कोषावस्था 10 से 15 दिन की होती है। मिकोष से जब प्रौढ़ बनता है तो वह बाहर निकलने के लिये अपने मुख से एक क्षारीय (Alkaline) द्रव निकालता है। जिससे कोये का अगला हिस्सा गल जाता है और उसमें एक छेद हो जाता है जिससे प्रौढ़ कीट बाहर निकलता है। इससे कोये का धागा कट जाता है।

(स) लाख कीट :

वैज्ञानिक नाम : *केरिया (लेक्फर) लाका* {*Kerria (Lacckfer) lacca* Kerr.}

गण : हेमिप्टेरा (Hemiptera)

कुल : लेसिफेरिडी (Lacciferidae)

जीवन चक्र (Life cycle) : इसके जीवन चक्र में तीन अवस्थाएँ अण्डा, शिशु व प्रौढ़ होती हैं।

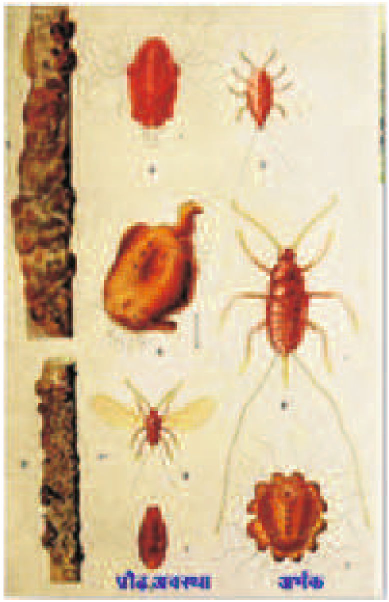

चित्र 9.2.3 : लाख कीट का जीवन चक्र

अण्डा (Egg) : मादा कीट लक्ष–कक्ष (Lac-cells) के अन्दर 200 से 500 तक अण्डे देती है। अण्डे निषिक्त (Fertilized) तथा अनिषिक्त (Unfertilized) दोनों प्रकार के दिये जाते हैं। दोनों प्रकार के अण्डों से नर तथा मादा कीट निकलते हैं। मादा कीट तीन प्रकार के अण्डे देती है–

1. ऐसी मादाएँ जिनके अण्डों से नर व मादा बराबर संख्या में निकलते हैं।
2. जिनके अण्डों से नर कम तथा मादा अधिक निकलती है।
3. जिन अण्डों से नर अधिक तथा मादाएँ कम निकलती है।

मादा कीट प्रायः पूर्ण विकसित अण्डे देती है अतः ये कुछ ही घण्टों में फूट जाते हैं जिनसे शिशु निकलते हैं। इसी कारण वैज्ञानिक इनकी मादाओं को बच्चे देने वाली (Viviparous) कहते हैं।

शिशु (Nymph) : अण्डा फूटने के पश्चात उससे 0.6 मि. मी. लम्बा 0.25 मि.मी. चौड़ा गुलाबी रंग का शिशु निकलता है। शिशु प्रौढ़ बनने से पहले तीन बार निर्मोक करते हैं। प्रथम निर्मोचन के पश्चात ही दूसरे इन्सटार में आँखें, टांगे तथा एण्टिनी नष्ट हो जाते हैं। परन्तु गुदा रोम 6 के बजाय 10 हो जाते हैं। दूसरे निर्मोचन के पश्चात नर और मादा शिशुओं को पहचाना जा सकता है क्योंकि नर की आँखें, एण्टिनी और टांगें फिर से बन जाती है, दस गुदा रोमों के स्थान पर एक शिशन बन जाता है तथा मुखांग विलुप्त हो जाते हैं। मादा शिशु में ये अंग नहीं मिलते हैं। नर के लक्ष–कक्ष लम्बे तथा कुछ सिगार के आकार का (Cigar-shaped) एवं मादा के गोल अण्डाकार होते हैं। नर प्रौढ़ कीट अपने लक्ष–कक्ष को छोड़कर बाहर निकल आता है तथा मैथुन करने के पश्चात मर जाता है। मादा कीट मैथुन के पश्चात आकार में काफी बढ़ती है तथा अधिक लाख पैदा करती है। जिस समय मादा कीट अण्डे देने वाली होती है तो उसके लक्ष–कक्ष के पीछे की तरफ एक पीला दाग बन जाता है।

प्रौढ़ (Adults): लक्ष कीट के नर व मादा भिन्न–भिन्न प्रकार के होते हैं। मादा आकार में नर से तीन गुना बड़ी होती है।

नर (Male): इनका रंग गुलाबी लाल होता है तथा ये दो प्रकार के होते हैं – पंखधारी और पंखहीन। पंखधारी नर कीटों में केवल अगली जोड़ी झिल्लीदार, पारदर्शक पंख होते हैं। ये प्रायः शुष्क ऋतु (बैशाख तथा जेठ की फसल) में पाये जाते हैं। इनका जीवनकाल 3–4 दिन का होता है। इनके निम्नलिखित लक्षण होते हैं –

1. सिर बड़ा, स्पष्ट मुखांग तथा अक्रियाशील होते हैं।
2. उपनेत्र दो जोड़ी तथा एण्टिनी शरीर के बराबर लम्बे सात खण्डीय होते हैं जिन पर रोम लगे होते हैं।
3. वक्ष मोटा, जिसमें एक जोड़ी पंख तथा तीन जोड़ी टाँगे होती हैं।
4. उदर आठ खंडीय आगे की ओर चौड़ा तथा पीछे की तरफ नुकीला होता है। अन्तिम खंड के सिरे पर नुकीला शिश्न (Penis) होता है।

मादा (Female) : यह भी गुलाबी रंग की लगभग 1.5 मि. मी. लम्बी होती है। इसका अधर तल (Ventral surface) चपटा तथा पृष्ठ तल (Dorsal surface) उभरा हुआ होता है। इसकी निम्नलिखित विशेषताएँ हैं :

1. इसके आँख, टाँग व पंख नहीं होते।
2. एण्टिनी अवषेशी (Vestigeal), छोटी प्रायः 3–4 खंडीय होती है।
3. मुखांग चुभाने, चूसने वाले तथा रोस्ट्रम (Rostrum) द्वि–खंडीय होती है।
4. मादा एक ही स्थान पर चिपकी रहकर पेड़ की शाखाओं से रस चूसती रहती है तथा लाख उत्पन्न करती है।
5. मध्य वक्ष पर एक प्रवर्धन होता है जिस पर श्वसन छिद्र (Spiracles) खुलते हैं।

6. उदर गोलाकार तथा इसके पृष्ठ सतह पर एक पृष्ठीय काँटा (Dorsal spine) होता है। उदर का पिछला भाग द्विखंडीय व अन्तिम खंड पर गुदा, जो फ्रिन्जयुक्त (Fringed) होती है।

(द) दीमक :

वैज्ञानिक नाम : *ओडेन्टोटरमीस ओबेसस* (*Odontotermes obesus* Rambur)

गण : आइसोप्टेरा (Isoptera)

कुल : टर्मिटिडी (Termitidae)

जीवन चक्र (Life cycle): इसके जीवन चक्र में तीन अवस्थाएँ अण्डा, शिशु व प्रौढ़ होती है।

चित्र 9.2.4 दीमक कीट का जीवन चक

अण्डा (Egg) : बरसात के शुरू होते ही पंखधारी नर व मादा अपने घरों से निकलकर मैथुन उड़ान (Nupital flight) भरते हैं। मादा द्वारा बाह्य वातावरण में स्रावित फेरोमोन (Pheromone) की उपस्थिति में नर आकर्षित होकर मैथुन क्रिया करते हैं। इसके पश्चात भूमि के अन्दर चले जाते हैं और नए निवह के निर्माण का प्रयत्न करते हैं। यह युगल साथ मिलकर छोटे–छोटे नप्चुअल कोष्ठ (Naptual chambers) का निर्माण कर संतति उत्पन्न करते हैं और इनकी पूर्ण देखभाल करते हैं। रानी इस बीच बढ़कर 7–8 सेमी. लम्बी हो जाती हैं तथा इसका पेट अण्डों से भर जाता हैं। रानी पहले कम संख्या में अण्डे देती है परन्तु बाद में 300 से लेकर 20,000 अण्डे प्रतिदिन देती हैं। दीमक के अण्डे हल्के पीले रंग के गुर्दे के आकार का (Kidney shaped) होते हैं। जिनकी लम्बाई 0.5 मि.मी. होती हैं। अण्डे वातावरण के अनुसार 20 से 90 दिनों में फूटते हैं।

शिशु (Nymph) : अण्डों से निकलने के पश्चात शिशु सफेद, पीले रंग के होते है जिनकी लम्बाई 1.0 मि.मी. होती हैं। प्रारम्भ में कुछ दिनों तक ये राजा रानी की विष्टा खाकर जीवन व्यतीत करते हैं एवं बाद में भोजन की तलाश में बाहर निकलते हैं। ये शिशु 6–13 महीनों में 4 –10 बार त्वचा निर्मोचन करने के पश्चात प्रौढ़ श्रमिक, सैनिक एवं पंखधारी नर, मादाओं में परिवर्तित हो जाते हैं। इनमें से श्रमिक अधिक बनते हैं।

प्रौढ़ (Adults) : प्रौढ़ कीट की विभिन्नरूपता में क्रमशः श्रमिक, सैनिक, पंखधारी नर–मादा, राजा एवं रानी होते हैं।

निर्जर्म जातियाँ (Sterile caste)

1.श्रमिक (Worker): यह दीमक की निर्जर्म जाति है जिसमें नर और मादा दोनों होते हैं। यह निवह की बहुत बड़ी श्रम शक्ति होती है जो कि कुल सदस्यों की लगभग 80–90 प्रतिशत होती है। इसका मस्तिष्क और आँखें अपेक्षाकृत छोटी होती हैं। श्रमिकों के मुखांग मजबूत व दृढ़ होते हैं, जिनका उपयोग सम्पूर्ण परिवार का पालन–पोषण करने तथा घर इत्यादि बनाने में किया जाता है। श्रमिकों का आर्थिक दृष्टि से प्रत्यक्ष महत्त्व है।

2. सैनिक (Soldier) : निवह में इनकी संख्या कुल सदस्यों की 3–5 प्रतिशत तक होती है। सैनिकों के मुखांग असाधारण रूप से विकसित होते हैं जिनका उपयोग यह मुख्यतः प्रतिरक्षा व शत्रु से संघर्ष के लिये करते हैं। इनके जबड़े लम्बे तथा दृढ़ होते हैं। यह भी श्रमिकों की भाँति नपुंसक होते हैं जिनमें नर व मादा दोनों होते हैं।

जननक जातियाँ (Reproductive castes)

1. निवही जातियाँ (Colonizing castes) : इस प्रकार के दीमक वर्षा ऋतु में पैदा होते हैं तथा रोशनी पर आकर्षित होते हैं। इनके शरीर पर दो जोड़ी लम्बे पारदर्शक पंख होते हैं जिनका प्रयोग ये मैथुन उड़ान के लिये करते हैं। इसके पश्चात् इनके पंख गिर जाते हैं। कुछ समय बाद इनमें से प्रत्येक जोड़ा (नर–मादा) राजा–रानी में परिवर्तित होकर मिट्टी में प्रवेश कर नये समाज की रचना करते हैं।

राजा और रानी (King and Queen) : राजा और रानी कॉलोनी के शाही सदस्य होते हैं। राजा का कार्य मात्र मादा को निषेचित करना होता है। रानी कॉलोनी की संस्थापक तथा जनक होती है। रानी दीमक निवह में सबसे बड़े आकार की होती है। इसकी लम्बाई लगभग 5 से.मी. तथा उदर की चौड़ाई 1 से.मी. होती है। इसका उदर अण्डों से भरा होने के कारण यह मोटी होती है इसलिये यह चल नहीं पाती और सिर्फ शाही कक्ष में पड़े–पड़े अण्डे देती रहती है। रानी दीमक एक सेकण्ड में एक अण्डा देती है और यह क्रम इसके सम्पूर्ण जीवन काल में चलता रहता है। मादा का जीवन काल 5 से 10 वर्ष का होता है। मादा की कुछ प्रजातियाँ एक दिन में सत्तर से अस्सी हजार अण्डे दे सकती हैं। इसलिये हम इसे अण्डे देने वाली मशीन भी कह सकते हैं।

2. पूरक जातियाँ (Complimentary castes) : यह लैंगिक दृष्टि से विकसित नर और मादा होते है। कॉलोनी में जननक जाति राजकुमार और राजकुमारी (Prince and Princess) की भाँति होते हैं जिनको भावी राजा और रानी कह सकते हैं। यह जननक युगल अनुकूल परिस्थितियों में नई कॉलोनी का निर्माण करने के लिये तैयार रहता है। कभी–कभी विशेष परिस्थितियों में यह युगल अपनी ही कॉलोनी के राजा–रानी के उत्तराधिकारी के रूप में भविष्य में संतानोत्पति करके कॉलोनी का विकास करते हैं।

प्रयोग–9.3
(प्रादर्श (Spot))

उद्देश्य– सफेद लट, टिड्डा, सरसों का मोयला, फली छेदक एवं खपरा भृंग कीटों के प्रादर्शो का अध्ययन

(अ) सफेद लट (White Grub)

वैज्ञानिक नाम : *होलोट्रिकिया कोन्सैन्गुनिया* (*Holotrichia consanguinea* Blanch.)

संघ : आर्थ्रोपोडा

वर्ग : इन्सेक्टा

गण : कोलियोप्टेरा (Coleoptera)

कुल : स्केरेबीडी (Scarabaeidae)

पहचान :

1. यदि शरीर काले, भूरे रंग का 18 मि.मी. लम्बा व 7 मि.मी. चौड़ा और सिर, वक्ष व उदर में विभक्त होता है तथा दो जोड़ी पंख जिसमें अग्र पंख मोटे जो विश्रामावस्था में पश्च जोड़ी को ढके रहते हैं, तो वह सफेद लट का भृंग होता है।
2. यदि लट सफेद रंग की, अंग्रेजी के 'C' आकार की एवं मुखागं अच्छे से विकसित हैं, तो वह सफेद लट का ग्रब होता है।

चित्र 9.3.1 : सफेद लट का प्रौढ़ भृंग एवं लट

लक्षण

1. इसका शरीर काले भूरे रंग का, सिर, वक्ष व उदर में विभाजित होता है।
2. दो जोड़ी पंखों में से अगली जोड़ी कठोर मोटे पंख इलाइट्रा कहलाते है।
3. विश्रामावस्था में पिछली जोड़ी पंख अगली जोड़ी पंख से ढ़के रहते हैं।
4. मुखांग काटने तथा चबाने के लिये उपयुक्त होते है।

विशिष्ट लक्षण

पूर्ण वृद्धि प्राप्त भृंग (Beetle) भूमि के अंदर 10–12 सेमी गहराई के अन्दर रहता है। मादा भृंग भूमि में गहराई में अण्डे देते है। अण्डे से निकले लारवा को सफेद लट (Grub) कहते हैं।

पूर्ण विकसित लट 38 से 48 मि.मी. लम्बी होती है। जून माह में बारिश की पहली बौछार के साथ ही वयस्क भृंग निकल आते हैं। वयस्क भृंग पेड़ों की पत्तियों को खाता है।

सफेद लट पोषक पौधों की जड़ों को खाती है तथा नव अंकुरित पौधों की जड़ों को खाकर क्षति पहुँचाती हैं।

(ब) खरीफ का टिड्डा (Grass Hopper)

वैज्ञानिक नाम : *हिरोग्लाइफस निग्रोरिप्लेट्स* (*Herioglyphus nigroreplatus*)

संघ : आर्थ्रोपोडा

वर्ग : इन्सेक्टा

गण : आर्थोप्टेरा (Orthoptera)

कुल : ऐक्रिडीडी (Acrididae)

पहचान

यदि कीट हरा, भूरा एवं विभिन्न रंगीन धब्बे युक्त, शरीर बड़ा सँकरा, लम्बा, बेलनाकार एवं सिर, वक्ष, उदर में विभक्त है तीन जोड़ी पैरों में पश्च् पैर बड़े हैं, पंख उपस्थित हैं तो वह खरीफ का टिड्डा है।

चित्र 9.3.2 : खरीफ का टिड्डा

लक्षण

1. टिड्डा अपेक्षाकृत बड़ा 8.0 से.मी. तक लम्बा होता है।
2. इसका शरीर सँकरा, लम्बा, बेलनाकार और द्विपार्श्व सममित होता है।
3. टिड्डे का शरीर काइटिन के बने क्युटिकली बाह्य कंकाल द्वारा ढ़का रहता है।
4. टिड्डे के शरीर को तीन प्रारूपी भागों में विभक्त किया जाता है – सिर, जिसमें छः खण्ड होते है, वक्ष में तीन खण्ड तथा उदर में 11 खण्ड होते हैं।
5. इसका सिर गतिशील, अकेली संरचना की भाँति दिखाई देता है। सिर के प्रथम खण्ड पर दो बड़े संयुक्त नैत्र इनके बीच में तीन साधारण नेत्र होते हैं।

विशिष्ट लक्षण

टिड्डा अति भुक्कड़ शाकाहारी और विश्वव्यापी होता है। ये घास के खुले मैदानों तथा अत्यधिक पत्तीदार वनस्पति वाले ऐसे स्थानों में पाए जाते है जहाँ उनके लिये खाने को भोजन तथा अण्डे देने के लिए स्थान की अधिकता होती है। इसलिए पश्चिम के मरूस्थलीय क्षेत्र के घास के मैदानों में सबसे अधिक होते हैं। मुखांग काटने व चबाने वाले होते है।

टिड्डे के प्रत्येक मध्य और पश्च् वक्ष भागों में एक–एक जोड़ी पंख होते हैं। प्रत्येक वक्षीय खण्ड से एक जोड़ी सहखण्ड टाँगे होती हैं, समस्त टाँगे चलने व उछलने के लिये काम में आती हैं। पिछली टाँगे बड़ी होती हैं। इसका उदर, पतला व बेलनाकार और 11 खण्डों में विभक्त होता है। उदर में 8 जोड़ी श्वसन रंध्र (Spiracles) पाये जाते हैं। प्रथम उदर खण्ड में एक कर्ण पटह होता है।

मादा की अपेक्षा नर टिड्डे का आकार छोटा होता है। मादा का उदर नर की अपेक्षा अधिक शुण्डाकार या नुकीला होता है।

(स) सरसों का मोयला (Mustard Aphids)

वैज्ञानिक नाम : *लाइपेफिसइ रिसाइमी* काल्ट (*Lipaphis erysimi* Kalt)

संघ : आर्थ्रोपोडा

वर्ग : इन्सेक्टा

गण : हेमीप्टेरा (Hemiptera)

कुल : ऐफिडीडी (Aphididae)

पहचान

यदि प्रौढ़ पंखयुक्त तथा पंखहीन दोनों प्रकार का हो एवं शरीर का आकार लगभग 1/10 से.मी. लम्बा, कोमल, रंग हरा अथवा हल्का सलेटी होता है तो वह सरसों का मोयला कीट है।

चित्र 9.3.3 मोयला कीट

लक्षण

1. इसका शरीर सिर, वक्ष तथा उदर में विभक्त होता है।
2. सिर के ऊपरी भाग में दो संयुक्त नेत्र होते हैं।
3. उपनेत्र केवल पंखयुक्त कीटों से मिलते हैं।
4. इनके पंखों में 'कोस्टल' और 'सब कोस्टल' शिराएँ नहीं होती हैं।

विशिष्ट लक्षण

प्रौढ़ पंखयुक्त तथा पंखहीन दोनों प्रकार के होते हैं। इनका शरीर आकार में छोटा लगभग 1/10 सेमी. लम्बा, कोमल, रंग हरा अथवा हल्का सलेटी होता है। सिर के ऊपरी भाग में दो संयुक्त नेत्र होते हैं। उपनेत्र केवल पंखयुक्त कीटों में मिलते हैं। दोनों जोड़ी पंख पारदर्शक होते हैं जिनमें से अगली जोड़ी बड़े तथा पिछले छोटे होते हैं। इनके पंखों में 'कोस्टल' और 'सब कोस्टल' शिराएँ नहीं होती हैं। वक्ष के निम्न तल पर तीन जोड़ी टाँगे होती हैं। इनका उदर नौ खण्ड का होता है जिसके प्रत्येक खण्ड में मोम ग्रन्थियाँ होती हैं। अंतिम खण्ड के पिछले सिरे पर गुदा (Anus) होती है जिससे मल, मधु स्राव के रूप में निकलता है।

(द) फली छेदक (Pod borer)

वैज्ञानिक नाम : *हेलिकोवरपा आर्मीजेरा*
(*Helicoverpa armigera* L.)

संघ : आर्थ्रोपोडा

वर्ग : इन्सेक्टा

गण : लेपिडोप्टेरा (Lepidoptera)

कुल : नोक्ट्यूडी (Noctuidae)

पहचान

1. यदि शरीर का रंग पीला, भूरा तथा छोटे–छोटे बादामी भूरे बालों से ढ़का रहता है एवं सिर, वक्ष व उदर में विभक्त है, दो जोड़ी पंख जिनमें अग्र पंख बड़े पीले रंग के, पश्च् छोटे सफेद रंग के हैं तो वह शलभ (मॉथ) है।
2. यदि शरीर एक सूंडी के आकार का है, उदर 10 खण्डों युक्त हरा या काला भूरा रंग, शरीर पर काँटो जैसे रोम, मध्य में गहरी स्लेटी रंग की धारियाँ हैं तो वह सूंडी (केटरपिलर) है।

चित्र 9.3.4 : फल छेदक कीट की प्रौढ़ एवं सुंडी

लक्षण

1. इसका शरीर सिर, वक्ष तथा उदर में विभक्त होता है।
2. सिर पर एक जोड़ी शृंगिकां, नेत्र तथा मुखांग पाये जाते हैं।

3. वयस्क में कुण्डलित व चूषक मुखांग होते हैं जबकि लार्वा (केटरपिलर) के काटने व चबाने वाले मुखांग पाये जाते है।

4. शरीर नीले भूरे रंग का कोमल बेलनाकार होता है।

विशिष्ट लक्षण

वयस्क शलभ में प्रथम जोड़ी पंख द्वितीय जोड़ी पंख की अपेक्षा बड़े होते हैं। इसके शरीर पर छोटे–छोटे बादामी भूरे बाल होते हैं। अग्र पँखों पर पीले–भूरे रंग की कई धारियाँ होती है। नीचे के पँखों का रंग सफेद होता है जिनकी शिराएँ स्पष्ट रूप से काली दिखाई देती है। बाहरी किनारों पर चौड़ा धब्बा होता है। वयस्क पर तीन जोड़ी टाँगें होती है।

(य) खपरा भृंग (Khapra Beetle)

वैज्ञानिक नाम : *ट्रोगोडर्मा ग्रेनेरियम* (*Trogoderma granarium*)

संघ : आर्थ्रोपोडा

वर्ग : इन्सेक्टा

गण : कोलियोप्टेरा (Coleoptera)

कुल : डरमेस्टिडी (Dermestidae)

पहचान

1. यदि भृंग गहरे कत्थई रंग का लगभग 2–3 मि.मी. लम्बा है एवं शरीर अण्डाकार, सिर छोटा तथा सिकुड़ने वाला हैं तो वह खपरा भृंग है।

2. यदि ग्रब छोटा, भूरे–सफेद रंग का एवं लाल भूरे रंग के बालों से ढका हो ओर शरीर के अन्त में पूँछ जैसी आकृति में अधिक लम्बे बाल हो तो वह खपरा की लट होती है।

लट

प्रौढ

चित्र 9.3.5 : खपरा भृंग की प्रौढ़ एवं लट अवस्था

लक्षण

1. इसका शरीर सिर, वक्ष तथा उदर में विभक्त होता है।

2. श्रृंगिकाएं दण्डाकार एवं छोटी होती हैं।

3. पंख दो जोड़ी होते हैं जिनमें अगले सख्त तथा पिछले जोड़े झिल्ली की तरह होते हैं एवं शरीर को पूरा ढके रहते हैं।

4. शरीर गहरे कत्थई रंग एवं अण्डाकार होता है।

विशिष्ट लक्षण

पूर्ण विकसित भृंगक (Grub) मटमैले रंग का तथा लम्बे कड़े बालों से युक्त लगभग 4 मि.मी. लम्बा होता है। प्रौढ़ भृंग छोटा, गहरे कत्थई रंग का लगभग 2–3 मि.मी. लम्बा होता है। नर भृंग आकार में मादा के आकार का लगभग आधा तथा अधिक गहरे रंग का होता है।

प्रयोग–9.4
(प्रादर्श (Spot))

उद्देश्य– खाद्य मछलियों का अध्ययन।

वर्गीकरण :

संघ : कार्डेटा

वर्ग : ऑस्टिक्थीस

गण : साइप्रिनीफार्मिस

कुल : साइप्रिनीडाई

उपर्युक्त वर्गीय स्थिति में कुल साइप्रिनीडाई के उदाहरणों में निम्न मछलियाँ सम्मिलित है–

(**i**) रोहू (*Labeo rohita*) (**ii**) कतला (*Catla catla*) (**iii**) कल्बासु (*Labeo calbasu*) (**iv**) मृगाल (*Cirrhinus mrigala*) (**v**) महाशीर (*Tor tor*)

लक्षण :– उपर्युक्त उदाहरण की मछलियों में निम्न लक्षण समान रूप से पायें जाते है –

(**i**) यह अण्डज, असमतापी होती है।

(**ii**) शरीर तर्कुरूपी तथा लम्बा होता है।

(**iii**) शरीर सिर, धड़ व पुच्छ में विभाजित होता है।

(**iv**) अन्तः कंकाल अस्थियों का बना होता है।

(**v**) बाह्य कंकाल शल्कों का बना होता है।

(**vi**) पार्श्व रेखा तंत्र उपस्थित होता है।

(**vii**) गलफड़ा, गलफड़ा ढक्खन द्वारा ढ़का रहता है।

(**viii**) मैथुन अंगों का अभाव होता हैं।

(**ix**) ये अलवणीय जल में पाई जाती हैं।

(**x**) जल में तैरने के लिए अग्र, पृष्ठ, श्रोणि, गुदा एवं पुच्छ पंख पाये जाते है।

(**xi**) सिर पर एक जोड़ी नेत्र एवं मुख उपस्थित होता है।

विशिष्ट लक्षण :–

(i) रोहू (*Labeo rohita*) :–

(**i**) इसकी पीठ की तरफ का हिस्सा काला या हरा होता है एवं पेट की तरफ का हिस्सा सुनहरी भूरे रंग का होता है।

(**ii**) यह जल के ऊपरी भाग एवं पेन्दे से अपना भोजन लेती है।

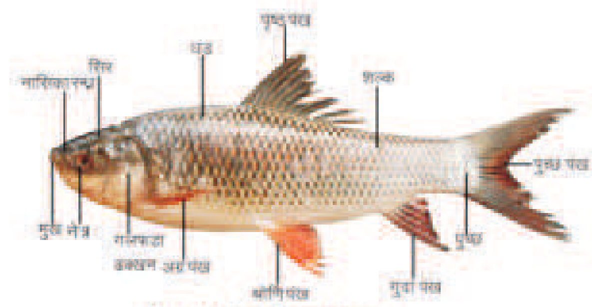

चित्र 9.4.1 रोहू की बाह्य संरचना

(ii) कतला (*Catla catla*) :–

(**i**) इसका सिर बड़ा एवं निचला जबड़ा फैला हुआ होता है।

(**ii**) यह भोजन जल की ऊपरी एवं मध्य सतह से लेती है।

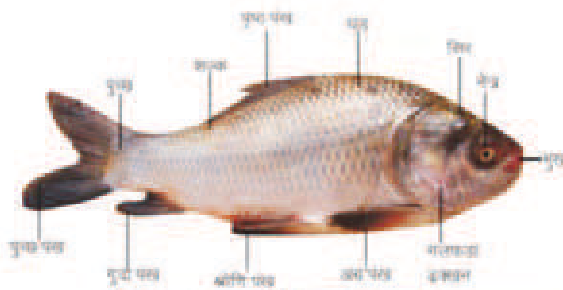

चित्र 9.4.2 कतला की बाह्य संरचना

(iii) कल्बासु (*Labeo calbasu*) :–

(**i**) इसका पीठ वाला हिस्सा पेट की तुलना में अधिक उत्तल होता है।

(**ii**) सर्वभक्षी होने से यह तालाब की अच्छी सफाई करती है।

(**iii**) इसके यकृत में विटामिन ए युक्त तेल 5 ग्राम के लगभग पाया जाता है।

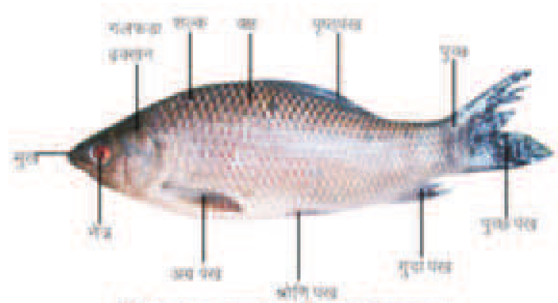

चित्र 9.4.3 कल्बासु की बाह्य संरचना

(iv) मृगाल (*Cirrhinus mrigala*) :–

(i) यह तेज बहती नदियों में मिलती है।

(ii) यह लवणीय जल को भी सहन कर सकती है।

(iii) इसके सिर के लम्बाई के बराबर चौड़ाई होती है।

(iv) शरीर के उदर वाला हिस्सा चाँदी के समान चमकीला एवं सफेद होता है।

(v) पंखों का रंग नारंगी होता हैं।

(vi) वजन रोहू एवं कतला की तुलना में धीरे बढ़ता है।

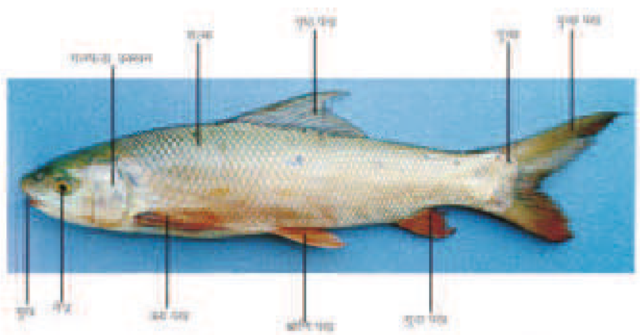

चित्र 9.4.4 मृगाल की बाह्य संरचना

(v) महाशीर (*Tor tor*) :–

(i) इसका पृष्ठीय शल्की क्षेत्र काला एवं पेट की तरफ का हिस्सा सफेद होता है।

(ii) यह चट्टानी पैन्दों एवं तेज बहती नदियों एवं झरनों में मिलती है।

(iii) वर्षा ऋतु में यह जल स्रोत से जल के बहाव के विपरित कई किलोमीटर दूर जाकर प्रदूषण रहित जल में अपने अण्डे देती हैं।

(iv) अण्डे देने के पश्चात् यह जल स्रोत की ओर जल के बहाव की दिशा में चलती है।

चित्र 9.4.5 महाशीर की बाह्य सरचना

प्रयोग–10 (अ)

उद्देश्य– पाठ्यक्रम में सम्बन्धित किसी एक फसल के कीट एवं रोगों के अध्ययन की सर्वेक्षण रिपोर्ट (निरीक्षण विवरण) प्रस्तुत करना।

विवरण– सर्वेक्षण रिपोर्ट बनाने हेतु उसके प्रथम मुख पृष्ठ पर निम्न बिन्दुओं को अंकित करना चाहिए–

1. सर्वेक्षण रिपोर्ट का नाम –
2. विद्यार्थी का नाम एवं रोल नम्बर –
3. कृषि फार्म के मालिक अथवा संस्था का नाम –
4. सर्वेक्षण रिपोर्ट की फसल का नाम –
5. फार्म पर भ्रमण की दिनांक –
6. मार्गदर्शक विषयाध्यापक जी का नाम –

विधि– खेत में उगी हुई फसल के कीट एवं रोगों के अध्ययन की सर्वेक्षण रिपोर्ट बनाने हेतु अपने विषयाध्यापकजी के साथ स्थानीय विद्यालय के कृषि फार्म अथवा किसी संस्था के फार्म, अपने परिचित के निजी कृषि फार्म में पाठ्यक्रम से सम्बन्धित फसल का भ्रमण करते हुए, एक ही फसल पर पाये गये विभिन्न कीटों एवं रोगों की रिपोर्ट बनाई जानी चाहिए।

(अ) कीटों की सर्वेक्षण रिपोर्ट :– एक ही फसल को विभिन्न प्रकार के कीट क्षतिग्रस्त करते हैं। यदि फसल की पत्तियाँ अनियमित कटी हुई पायी जाती है तो इस प्रकार की क्षति काटने एवं चबाने मुखांगों के कीटों द्वारा होती है।

जिन कीटों के मुखांग चुभाने एवं चूसने वाले होते है उन पौधों की पत्तियाँ कमजोर एवं मुड़ी हुई दिखती है। ध्यान से पौधों का अवलोकन करने पर कीटों के अण्डे, लार्वा, निम्फ, प्यूपा वयस्क अवस्था दिखाई देगी।

फसल को नुकसान पहुँचाने वाले कीटों का नामकरण अपनी पाठ्यपुस्तक में वर्णित कीटों के लक्षणों एवं चित्रों की सहायता से करें।

कीटों का नामकरण करने के पश्चात् उनके द्वारा पहुँचायी गयी क्षति के लक्षण एवं कीट के द्वारा नुकसान पहुँचाने की अवस्था (लार्वा, निम्फ, वयस्क) का भी वर्णन अपनी सर्वेक्षण रिपोर्ट में करें।

इसके साथ ही यदि सम्भव हो तो उपलब्ध सुविधा के अनुसार कीटों के नमूनों का भी संग्रहण करें।

(ब) रोगों की सर्वेक्षण रिपोर्ट :– पौधों में रोग फफूँद, विषाणु, जीवाणु, फाइटोप्लाज्मा नामक रोगजनकों की विभिन्न प्रजातियों द्वारा तथा पोषक तत्वों की कमी से भी रोग लक्षण प्रदर्शित होते हैं।

खेत में पौधों पर रोगी भागों के दिखाई देने पर अपनी पाठ्यपुस्तक में वर्णित लक्षणों एवं चित्रों की सहायता से फसलों पर पाये गये रोगों की पहचान करते हुए उनके खेत में दिखाई दे रहे रोगों के लक्षणों का वर्णन करे साथ ही तुलना हेतु स्वस्थ एवं अस्वस्थ नमूनों का भी संग्रहण करें।

प्रयोग–10 (ब)

उद्देश्य– कृषि फसलों को हानि पहुँचाने वाले कीटों अथवा पौधों के रोग ग्रस्त भागों के नमूनों का संग्रहण प्रस्तुत करना ।

आवश्यक सामग्री– कीट, रोगग्रस्त पादपों के भाग, हस्तजाल, प्रकाश प्रपंच, फेरोमोन प्रपंच, चूषक यंत्र, प्रलोभक, कैची, चिमटी, मारक बोतल, हैण्डलैंस, सैटिंग बोर्ड, कीट एकत्रकरण बक्सा, ब्लाटिंग शीट, 90 प्रतिशत सान्द्र एल्कोहल, फोर्मलीन, इथाइल एसिटेट, वैस्क्युलम, प्लान्ट प्रेस, हरबेरियम फाइल, पारदर्शक टैप इत्यादि।

चित्र 10 (ब) 1– मारक बोतल

चित्र 10 (ब) 2– सैटिंग बोर्ड

(अ) कीटों का संग्रहण :–

कीटों का संग्रहण करने हेतु उनकी लार्वा अवस्थाओं को हाथों से, उड़ने वाले कीटो (बिटिल्स, तितलियाँ, शलभ, टिड्डे, बग्स, मक्खियाँ) इत्यादि को हस्त जाल (Hand net) प्रकाश प्रपंच (Light trape) फेरोमोन प्रपंच (Pheromone trape) प्रलोभकों (Attractants) इत्यादि युक्तियों को आवश्यकतानुसार प्रयुक्त करते हुए पकड़ा जाता है।

कीटों को पकड़ने के पश्चात् चौड़े मुँह वाली बोतल को मारक बोतल (Killing bottle) हेतु प्रयुक्त करते है। इस हेतु चित्रानुसार रूई के फोहे को इथाइल एसिटेट में डुबोकर मारक बोतल के ढक्खन के बीच में लगी हुई उल्टी शीशी में रख देते हैं तत्पश्चात् जीवित कीटों को इस बोतल में डालकर ढक्खन को बन्द कर देते है, जिससे कीट शीघ्र ही मर जाते है एवं कीटों के पंख सुरक्षित रहते हैं।

चित्र 10 (ब) 3 – कीट एकत्रकरण

कीटों का सामान्यतः सूखा संग्रहण ही किया जाता है। इस हेतु मारक बोतल से मरे हुए कीटों निकालकर उनको सुखाने के लिए सैटिंग बोर्ड (Setting board) काम में लिया जाता है।

सैटिंग बोर्ड में पंखों वाले कीटों को इस प्रकार लगाया जाता है कि नाली वाले स्थान पर उनका सिर, वक्ष एवं उदर वाला हिस्सा रखते हुए उसकी दोनों बाहु पर उनके पंखों को फैला देते हैं, तत्पश्चात् पिनों को उनके वक्ष वाले स्थान की मध्य रेखा के पास वाले स्थान पर लगा देना चाहिए। कुछ दिनों के पश्चात् कीट जब सूख जाये तो उनको पिनों सहित निकालकर कीट एकत्रकरण बक्से (Insect collection box) में लगा देते हैं। साथ ही नैफ्थलीन की गोलियों को भी इसी बक्से में लगा देना चाहिए जिससे कीटो का संग्रह भविष्य में खराब नहीं हो।

नैफ्थलीन की गोलियों को कीट एकत्रकरण बक्से में लगाने हेतु पिनों को चिमटी की सहायता से पकड़कर मोमबत्ती की लौ में पिनों की घुण्डी की तरफ वाले हिस्से को गर्म करते हुए

प्रवेश कराते हैं तत्पश्चात् नैफ्थलीन की गोलियों युक्त पिनों के नुकीलें सिरों को चुभोकर कीट एकत्रकरण बक्से में लगा देना चाहिए।

छोटे कीटों (एफिड्स, जेसिड्स, थ्रिप्स) को पिनों की सहायता से नहीं लगाया जा सकता है अतः उन्हें मौटे सफेद कागज पर रखकर गोंद अथवा पारदर्शक टेप से चिपकाकर कागज के पिन लगाकर कीट संग्रहण बक्से में रखा जाता है।

कीटों के लार्वा को ढक्खन वाली छोटी परखनलियों में 70–80 प्रतिशत एल्कोहल अथवा 4 प्रतिशत फोर्मलिन में सुरक्षित करके रखा जाता है।

(ब) पौधों के रोगग्रस्त भागों का संग्रहण :–

पौधों के रोगग्रस्त भागों को वैस्कूलम अथवा पॉलीथीन बैग में इकट्ठा करते है। इकट्ठे किये गये भागों को कैची अथवा सिकेटियर (*Secateur*) से इच्छित नाप के काट कर शोषकपत्र (*blotting sheet*) पर फैलाकर कर रखते है, तत्पश्चात उसके ऊपर दूसरी परत शोषकपत्र की लगाकर प्लान्ट प्रेस में रखकर उसके पेच कस देते है। दो–तीन दिन बाद उनको पलट देते हैं, जिससे प्रादर्श शोषक पत्रों पर चिपके नहीं। इस प्रकार 10–12 दिन सुखाने के पश्चात प्रादर्शो को हरबेरियम फाइल मे लगाकर पारदर्शक टेप से चिपका देते है तथा प्रादर्श के रोग की पहचान, परपोषी पौधे का नाम, एकत्रकरण स्थान, एकत्रकरण दिनांक आदि सूचनाएँ अंकित करते हैं। प्लान्ट प्रेस की सुविधा उपलब्ध न होने पर प्रादर्शो को किन्हीं भी समतल वस्तुओं से भी दबाकर रखा जा सकता है।

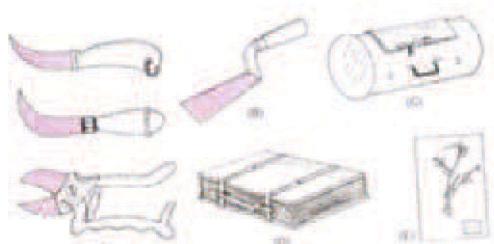

(A कटर B खुरपी C वैस्कूलम D प्लान्ट प्रेस E हरबेरियम शीट)

चित्र 10 (ब) 4 – रोग ग्रस्त पादप भागों के संग्रहण यंत्र

दोष :–

1. उपर्युक्त संग्रहण सूखा संग्रहण कहलाता है। इस विधि द्वारा मॉसल पौधों के रोगग्रस्त भागों का संग्रहण नहीं किया जा सकता है।

लाभ :–

1. पौधों के रोगी भागों के संग्रहण की सूखी संग्रहण विधि सरल होने से आसानी से अपनायी जा सकती है।
2. सूखी संग्रहण विधि में विशेष दक्षता की आवश्यता नहीं होती है।

नोट :– मॉसल एवं रसदार संक्रमित भागों को संरक्षित करने के लिए आर्द्र संरक्षण विधि का प्रयोग करते हैं जिसमें F.A.A. विलियन का प्रयोग किया जाता है।

11. मौखिक परीक्षा

बाह्य परीक्षक द्वारा प्रायोगिक परीक्षा में प्रश्न पूछ कर छात्र का मूल्यांकन किया जाएगा। इस हेतु छात्र को सभी अध्यायों के पीछे दिए गए मुख्य बिन्दु तथा बहुचयनात्मक, अति लघूउत्तरात्मक प्रश्नों के उत्तर तैयार कर प्रस्तुत होना चाहिए तथा प्रायोगिक अभिलेख में उल्लेखित सभी प्रयोगों का विस्तृत अध्ययन करना चाहिए तथा विषयाध्यापकों द्वारा भी कक्षा में छात्रों का समय–समय पर मॉक इन्टरव्यू लिया जाना चाहिए।

12. प्रायोगिक अभिलेख : तैयारी एवं प्रस्तुतिकरण

प्रत्येक छात्र को अध्यापक के निर्देशन में एक प्रायोगिक अभिलेख तैयार करना है जिसमें उसे वर्ष पर्यन्त समय–समय पर कक्षा में कराए गए प्रयोगों की विषय–वस्तु का निर्देशानुसार विवरण प्रस्तुत करना है तथा कार्य का अध्यापक महोदय द्वारा मूल्यांकन कराना है तथा मूल्यांकन की दिनांक एवं कार्य के निष्पादन का विवरण प्रायोगिक अभिलेख में अंकित करना है जिसे बाह्य परीक्षक द्वारा परीक्षा के समय अवलोकित किया जाएगा तद्नुरूप छात्र को अंक प्रदान किए जाएंगे।